सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला : उनका काव्य और भाव बोध

त्रिभुवन विश्वविद्यालय

मानविकी तथासामाजिक शास्त्र संकाय

हिन्दी केन्द्रीय विभाग

में

हिन्दी स्नातकोत्तर (एम.ए. हिन्दी) के

दशमपत्र के रुप में

प्रस्तुत

शोधपत्र

शोधार्थी

देवराज अधिकारी

हिन्दी केन्द्रीय विभाग

त्रिभुवन विश्वविद्यालय कीर्तिपुर

काठमाडौँ, नेपाल

२०७१

त्रिभुवन विश्वविद्यालय

मानविकी तथासामाजिक शास्त्र संकाय

हिन्दी केन्द्रीय विभाग

कीर्तिपुर, काठमाडौं

स्वीकृति प्रमाण पत्र

देवराज अधिकारी

द्वारा प्रस्तुत

‘सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला : उनका काव्य और भाव बोध’

शोत्र पत्र मूल्यांकन समीति

क्र.सं.	पद	नाम	हस्ताक्षर
१.	विभागीय प्रमुख	डा. श्वेता दीप्ति	.....
२.	शोध निर्देशक	डा. श्वेता दीप्ति	.....
३.	बाह्य परीक्षक	डा. संजीता वर्मा	.....

त्रिभुवन विश्वविद्यालय

मानविकी तथा सामाजिक शास्त्र संकाय

हिन्दी केन्द्रीय विभाग

कीर्तिपुर, काठमाडौं

प्रमाणित किया जाता है कि **'सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला : उनका काव्य और भाव बोध'** शीर्षक शोधपत्र मेरे निर्देशन में इस विभाग के छात्र देवराज अधिकारी ने तैयार किया है । एम.ए. दशम् पत्र के रूप में प्रस्तुत इस शोधपत्र को त्रिभुवन विश्वविद्यालय द्वारा मूल्यांकन के लिए अग्रसारित करती हूँ ।

.....

डा. श्वेता दीप्ति

शोध निर्देशक

विभागीय प्रमुख

हिन्दी केन्द्रीय विभाग

त्रिभुवन विश्वविद्यालय

कीर्तिपुर, काठमाडौं

दिनांक :

कृतज्ञता ज्ञापन

हिन्दी केन्द्रीय विभाग के अन्तरगत रहकर दशम पत्रके प्रयोजन के लिए यह शोधपत्र तैयार किया है । '**निराला**' जी की साहित्यिक जीवनी, व्यक्तित्व और समालोचनाका सम्पूर्ण रुप से विश्लेषण करना निश्चय ही कठिन है ।

परम कृपालु श्री रामभक्त श्री कुलेश्वर हनुमान जी के चरणों में प्रार्थना करता हूं । इस शरीर को तो कुछ भी वोध नहीं है । ज्ञान वैराग्य भक्ति की तो वात कोसो दूर है । यह भगवान स्वयं श्री रामभक्त हनुमान जी की कृपा से ही समझें ।

भगवान जब पृथ्वीपर अवतार लेते हैं तव उनका उद्देश्य रहता है की गौ, पृथ्वी, देवता, ब्राह्मण तथा सम्पूर्ण जीव भक्तों की रक्षा करना तथा यहां धरातल पर आकार कुछ जीवों को तो अपनी अंतरंग लीला में सम्मिलित करने हैं । अपने भक्तो को जो लीला भगवान धरातल पर आकर करते हैं, उनका पाठ मनन, चिन्तन व्याख्या श्रवण आदि करके भगवान के प्रति खिंचाव तथा संसार के प्रति अनासक्ति हो जाये और वह जीव उपरोक्त कर्म द्वारा भगवान को प्राप्त करने का अधिकारी हो जाये उसीको निमित्त वनाकर धरातल पर प्रकट हो जाते हैं ।

इसी प्रकार हम जीवों मे श्रेष्ठ मनुष्य होकर कुछ उद्देश्य लेनी चाहिए (कुछ करना चाहिए) इसीको हृदयं मे लेकर भगवान की सेवामें रहकर इस शोधपत्र तयारी कर रहे हैं ।

प्रस्तुत शोधपत्र हमनें हिन्दी केन्द्रीय विभागीय शोधनायक **डॉ श्वेता दीप्ति** के निर्देशन में पूरा किया है । शोधपत्र चयन (लेखन) प्रारम्भ से अन्त्यतक वार-वार सक्रिय कराने वाली एवं सम्पूर्ण संकलन लेखन (टङ्कण) प्रति कार्य भार सम्हालने वाली है । स-परिवार में रहकर अमूल्य समय प्रदान की है इनकी प्रति हार्दिक कृतज्ञता, मंगला शासन/एवं समस्त हिन्दी केन्द्रीय गुरु वर्ग में आभार व्यक्त करते है तथा कर्म चारियों प्रति धन्यवाद ।

इसी प्रकार सल्लाह सुझाव हौसला बढ़ाने वाले गुरु प्रा. श्री सीताराम विष्ट जी, ने.प्रा. श्री धनश्याम उपाध्याय कंडेल जी, श्री सविन खनालजी, गुरु पुरुषोत्तम पौडेलजी प्रति हार्दिक कृतज्ञता अर्पण ।

उचित संस्कार देकर विभिन्न सहयोग एवं अध्ययन कराने वाले परम पूज्य माताजी **श्री हरिप्रिया अधिकारी** पिता **श्री वेदनाथ अधिकारी** प्रति सदैव ऋणी हूँ तथा वढे भाई **तिर्थराज अधिकारी** भावी **राधा अधिकारी** प्रति हार्दिक कृतज्ञता भनिज अंकित एवं भतिजी अस्मिता प्रति धन्यवाद ।

पारिवारिक उलझनोमें गुजरकर हमको अध्ययन प्रति उत्साह उमंग वढाने वाली जीवन संगिनी **श्रीमती कमला अधिकारी** एवं पुत्री **अप्रमा, श्रीरंगा** को धन्यवाद । परोक्ष - अपरोक्ष के मित्रगण श्री भक्तिसार आचार्य, छविरण देवकोटा, पिताम्वर निरौला, रामानुज भण्डारी, रमा पोखेल तथा सुनिल खतिवडा एवं समस्त सहयोगी मित्रगणोंको हार्दिक धन्यवाद ।

इसी प्रकार शोधपत्र में कम्प्युटर टाइपिस्ट के सहयोगी **यूनिर्भसिटी कम्प्यूटर सर्भिसको** हार्दिक धन्यवाद ।

अन्त्य में शोधपत्रका आवश्यक मूल्याङ्कनके लिए त्रि.वि. हिन्दी केन्द्रीय विभाग समितिको प्रस्तुत करते हैं ।

वि.सं. मितिः २०७१ **शोधार्थी**

ई.सन् २०१५ देवराज अधिकारी

प्रथम अध्याय

१.१ पृष्ठभूमि

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' हिन्दी साहित्य इतिहास के आकाश में एक दैदिव्यमान नक्षत्र हैं । सन् १९१९ के आस-पास हिन्दी काव्य में एक नवीन कविता धारा का जन्म हुआ । इसे छायावाद कहा गया । स्वच्छन्दता, रहस्यात्मकता और वेदना इसके प्रमुख अवयव थे । आधुनिक हिन्दी कविता के इतिहास में छायावाद का आविर्भाव एक आकस्मिक घटना नहीं है । अपने युग की मांग तथा अपने पूर्ववर्ती युग की प्रेरणा पाकर कविता की एक स्वतंत्र प्रवृत्ति के रूप में छायावाद का विकास धीरे-धीरे स्वाभाविक ढंग से हुआ है । इस युग का कवि भावनुभूति और उसकी अभिव्यंजना की एक विशिष्ट पद्धति का अनुशरण करता है । छायावादी कवियों में चार नाम मुख्यत: जाने जाते है - जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, सुमित्रानन्दन पंत एवं महादेवी वर्मा ।

हिन्दी साहित्य की कविता धारा में निराला कवि गुरु हैं । इनके व्यापक व्यक्तित्व की गरिमा तो इसी अर्थ में निहित है कि इस कवि की कविता को भी मानवी सत्ता कहकर इसकी मुक्ति का मार्ग प्रशस्त किया । ये निश्चित अर्थ मे युग पुरुष थे । यही कारण है कि इनकी कविताओं को प्रवृत्तियों के आधार पर तो किसी वाद विशेष से जोड़ कर देखा जा सकता है, लेकिन किसी वाद से पूर्णतया प्रभावित इनका व्यक्तित्व कभी नहीं रहा । इनका जीवन और साहित्य, कर्म और ज्ञान, साधना और कल्पना, विचार और व्यवहार जगत् की एकरुपता में ही अर्थ और विस्तार पाता रहा हिन्दी कविता धारा की दो सर्वथा विपरीत प्रवृत्तियों वाला विशिष्टताओं से सम्पन्न छायावादी और प्रगतिवादी काव्य के दर्शन इनमें होते है ।

अन्य छायावादी कवियों की भाँति निराला में भी वैयक्तिकता का स्वर प्रधान रहा है । निराला संघर्ष और क्रांति के गायक रहे हैं इसलिए इनकी जीवनानुभूतियों में शीतल शांत सुस्मित करने वाली मन की दशाओं की अपेक्षा दुखों और यातनाओं का लम्बा सिलसिला ही अधिक रहा है । फलत : इनके वैयक्तिक स्वरों में कहीं तो दुखों को भोगती मनोदशाओं का चित्रण है, तो कहीं इसके विरुद्ध लड़ते रहने और संघर्ष करते रहने की प्रेरणादायिनी प्रवृत्ति । इसमें सन्देह नहीं कि कवि निराला जीवन की समस्त विपदाओं को भोगते रहने के

बावजूद अपनी उर्जा को अधोगामी नहीं होने देते इनकी तेजोदीप्त चेतना भयमुक्त विचरण करती है । सामाजिक विसंगतियों के शिकार निराला ने अपनी अभिव्यक्ति में कभी दीनता, दासता और दबी जा रही जीवन उर्जा को महत्व नहीं दिया । साहित्य और समाज, व्यक्ति और समष्टि को जीवन का वरदान देने वाला यह कवि निन्दा उपेक्षा और उपहास का प्रतिदान ही पाता रहा । वैयक्तिकता के आग्रह में इस सरस्वतीपुत्र ने अपनी हाय जीवन की आह कथा ही प्रस्तुत की है

"धिक जीवन जो पाता ही आया विरोध

धिक साधन जिसके लिए ही सदा किया शोध ।"

पंत जहाँ प्रकृति पुजारी बनकर सौंदर्य चित्रण में लिप्त हैं, प्रसाद जहाँ सौन्दर्य को आदर्श मंडित करने में रत हैं, निराला का प्रेम और सौन्दर्य वहाँ मानव को स्वतंत्र चेतना का दिग्दर्शन कराता है । नारी प्रेम हो या देश प्रेम, पुरुष प्रेम हो या प्रकृति प्रेम निराला की भावाभिव्यक्ति अचूक बन पड़ी है । उसी प्रकार सौन्दर्य चेतना की अभिव्यक्ति में भी निराला का जीवन सौन्दर्य की सम्पूर्णता को अपनी चेतना प्रवाह में कैद करता है । भावबोध का अकूत भण्डार इनके काव्य संसार में है । प्रस्तुत शोध मे इसी भाव भण्डार को व्याख्यायित करने की कोशिश की गई है । सीमाओं के तहत शोध में इन भाववोधों की संक्षिप्त व्याख्या की गई है ।

१.२ शोध का शीर्षक

प्रस्तुत शोध पत्र का शीर्षक "सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला : उनका काव्य और भाव बोध" है । चूंकि प्रस्तुत शोध पत्र में निराला के काव्य में वर्णित भाववोध पर दृष्टि डालने की कोशिश की गई है इस दृष्टिकोण से शोध का शीर्षक विषयानुरूप है ।

१.३ शोध का प्रयोजन

प्रस्तुत शोध कार्य त्रिभुवन विश्वविद्यालय मानविकी तथा सामाजिक संकाय अन्तर्गत हिन्दी केन्द्रीय विभाग की स्नातकोत्तर उपाधि हेतु, हिन्दी पाठ्यक्रम के दसम् पत्र के रूप में आंशिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है ।

१.४ शोध का उद्देश्य

शोध का उद्देश्य सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला के काव्य संसार में वर्णित भावबोधों की संक्षिप्त विश्लेषण करना है ।

१.५ अध्ययन सीमा

किसी भी कार्य की सुनिश्चितता और पूर्णता के लिए एक प्रारूप और सीमा रेखा तय की जाती है जिससे शोध कार्य में सहजता और सरलता आ सके । इस शोध पत्र की निम्न सीमाएँ है ।

१. इस शोध पत्र में छायावाद पर प्रकाश डाला गया है ।
२. छायावादी अन्य कवियों के साथ ही निराला के युग को भी समेटने की कोशिश की गई है ।
३. निराला की भाषा, काव्य शैली और रचनाओं का भी अध्ययन किया गया है ।
४. यह शोध पूर्णतया पुस्तकालयीय सामग्रियों के अध्ययन पर आधारित है ।

द्वितीय अध्याय

२.१ सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' का जीवन परिचय

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' का जन्म बंगाल के मेदिनीपुर जिले की महिषादल नामक रियासत में सन् १८९६ माघ शुक्ल वसन्त पञ्चमी के दिन हुआ था।

'निराला' जी के पिता का नाम श्री रामसहाय त्रिपाठी था। वह उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले में गढाकोला नामक गाँव के निवासी थे। वह अपना निवास छोड़कर महिषदल नामक रियासत 'बंगाल' में बस गये थे और वहीं राजा के यहाँ नौकरी कर ली थी। वहां उन्नति से वह सौ सिपाहियों के ऊपर 'जमादर' हो गये थे। प्रथम पत्नी के देहावसान के बाद श्री राम सहाय त्रिपाठी ने द्वितीय विवाह किया। इन्हीं की कोख से निराला जी का जन्म हुआ।

जन्म के तीन वर्ष पश्चात इनकी माता की मृत्यु हो गई। राम सहाय जी दूसरी पत्नी की मृत्यु के कारण बहुत उद्विग्न रहने लगे और उनके स्वभाव में असामान्य कठोरता आ गई। माता की मृत्यु के कारण मातृ स्नेह से तो वंचित हो ही गए, पिता के कठोर स्वभाव के कारण वह प्रायः पितृ-स्नेह से भी वंचित ही रहे। इसका कारण पिता के स्वभाव का रूखापन तो था ही, साथ ही स्वयं निराला का उद्धत स्वभाव भी था। इन्हें बचपन से ही बन्धनों से चिढ़ थी और स्वच्छन्दता से प्रेम था। परिणाम यह हुआ कि इन्हें अपने पिता के द्वारा की जाने वाली पिटाई के बारे में निराला जी ने स्वयं भी लिखा है। डा. राम विलास शर्मा निराला जी के निकट रहे हैं उन्होंने इस सम्बन्ध में निराला जी के कथन को उद्धृत किया है, "मारते वक्त पिता जी इतने तन्मय हो जाते थे कि वे भूल जाते थे कि दो विवाह के बाद हुए इकलौते बेटे को मार रहे थे। मुझे भी स्वभाव न बदल पाने के कारण मार खाने की आदत हो गयी थी।"

सूर्यकान्त को पाँच वर्ष की अवस्था में एक बंगाली स्कूल में दाखिल कर दिया गया। तीन-चार साल अध्ययन के पश्चात् वह एक अंग्रेजी हाई स्कूल में पढ़े। एण्ट्रेन्स तक आते-आते कविता करने लगे थे। काव्य के प्रति उनका स्वभाविक आकर्षण था। इसी सिलसिले में राजकीय पुस्तकालय से अँग्रेजी, बंगला एवं संस्कृत के अनेक काव्यग्रन्थ पढ़

डाले । गीता और रामायण का भी अध्ययन किया । दर्शन-सम्बन्धी भी अनेक पुस्तकें पढ़ डाली ।

निराला गणित में बहुत कमजोर थे । आगे पढ़ना इनके लिए दूभर हो गया । साथ ही इन्होंने कई मित्रों से सुन लिया था कि कविन्द्र-रवीन्द्र नवें दर्जे से आगे नहीं पढ़ सके थे । रवीन्द्र को अपना आदर्श मान लिया और बिना एण्ट्रेन्स पास किए ही इन्होंने पढ़ना छोड़ दिया । स्कूली शिक्षा बहुत ही सीमित रही है ।

इनका जीवन अनेक अभावों एव विपत्तियों से पीड़ित रहा, किन्तु इन्होंने किसी विपत्ति के सामने झुकना नहीं सीखा अभावों की तीव्र एवं मर्मान्तक व्यथा को झेलते हुए भी ये साधना में तल्लीन रहे । मगर कब तक कोई इस तरह जी सकता है ? निराला का मन और बुद्धि तो संघर्षों की अपेक्षा करते हुए अविचलित रहा किन्तु उनकी चेतना के भीतर जैसे कुछ टूट रहा था, घुल रहा था । उनके जीवन के अन्तिम वर्ष जहाँ उनकी चेतना के अथक-अविचल संघर्ष की कहानी कहते हैं, वहाँ उनके जीवन की विपत्तियों और व्यथाओं की दुर्निवार शक्ति को भी व्यंजित करते हैं ।

इस दृष्टि से मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, सियाराम शरण गुप्त, प्रेमचन्द्र, रामचन्द्र शुक्ल तथा डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी के नाम उल्लेखनीय हैं ।

सूर्यकान्त जी का शरीर लम्बा-चौड़ा, स्वस्थ्य एवं बलिष्ठ था । वह खेलकूद में विशेष रुचि लेते थे और फुटबॉल के अच्छे खिलाड़ी थे, घोड़े की सवारी करते थे, तैरते थे एवं बन्दूक चलाते थे । इनके अलावा वह संगीत की आलापें लेते थे । अपने आकर्षक व्यक्तित्व एवं उपयुक्त गुणों के कारण निराला बचपन से ही साधारण जनों से लेकर राजकुमारों तक में समान रूप से प्रिय हो गये थे ।

वह महिषादल में थे और महिषादल के राजा के छोटे भाई इन्हें बहुत प्यार करते थे । निःसन्तान के कारण वह इनको गोद लेना चाहते थे । परन्तु उनकी असामयिक मृत्यु हो गई ।

निराला जिस स्कुल में पढ़ते थे, वहां अंग्रेजी बंगला, तथा संस्कृत की नियमित शिक्षा दी जाती थी, परन्तु इनको हिन्दी के प्रति सहज-स्वाभाविक आकर्षण था, परन्तु हिन्दी

के अध्ययन की कोई व्यवस्था नहीं थी । इसकी पूर्ति इन्होंने अपने पिताजी के मित्रों के साथ की । पिता सिपाहियों के साथ बैठकर **श्री रामचरित मानस** और **ब्रज विलास** पढा करते थे और अपने सुरीले कण्ठ से गाकर सबको मुग्ध किया करते थे । इस तरह इनका हिन्दी का ज्ञान धीरे-धीरे बढ़ता गया । विदुषी पत्नी के संसर्ग से इनका हिन्दी-ज्ञान प्रौढ़ता को प्राप्त हुआ । सूर्यकान्त के मन में बंग देश और बंगला भाषा के प्रति संस्कार बस विशेष प्रेम था । अपनी कृतियों मे उल्लेख किया है ।

"बंगाल मेरी जन्मभूमि है, इसलिए बहुत प्रेम है ।"

"बंगला मेरी वैसी ही मातृ भाषा है, जैसी हिन्दी ।"

निराला ने अपने स्कुली जीवन में ही कविता करना आरम्भ कर दिया था । वह अवधी और ब्रजभाषा में पद लिखने लगे थे । इतना ही नहीं चौदह वर्ष की अवस्था तक संस्कृत में भी पढ़ने लिखने लगे थे । कविता के प्रति निराला का यह सम्मोहन क्रमशः बढ़ता ही गया और वह कालान्तर में महाकवि निराला, महाप्राण निराला आदि के रूप में प्रसिद्ध हुए ।

इस बीच निराला **'समन्वय'** पत्र से सम्बन्ध ही गए । यही समय था जब गिरीशचन्द्र घोष के नाटकों से उन्हें मुक्त छन्द का संस्कार मिला । **'जुही की कली'** लिखते समय सन् १९१६ में रवीन्द्र नाथ के भाषिक विधान का आकर्षण भी था वैसा लिखने की चुनौती भी । ब्रजभाषा के रीतिवाद में रचे-बसे उन काव्य-रसिकों को निराला एक तरह का जवाब दे रहे थे, जिन्हें आधुनिक खड़ी बोली अनगढ़ और अकाव्यात्मक लग रही थी ।

वंशीय परम्परा के अनुसार सूर्यकान्त त्रिपाठी का विवाह केवल चौदह वर्ष की ही अवस्था में हुआ था । इनका विवाह चांदपुर जिला फतहपुर की एक सुन्दरी कन्या मनोहरा देवी के साथ हुआ । मनोहरा देवी अत्यन्त सुन्दर और गुणवती महिला थीं । वह स्वभाव से सौम्य, रुचियों से सुसंस्कृत, प्रवृत्ति से धर्मपरायण और साहित्यानुरागिणी थीं । हिन्दी कविता को 'निराला' उन्हीं की देन माननी चाहिए । पत्नी के माध्यम से हिन्दी काव्य के प्रति उनकी सोई हुई आशक्ति को उभार दिया । **'तुलसीदास'** नामक कथा-काव्य में निराला जी ने प्रकारान्त से इस तथ्य को प्रस्तुत करते हुए लिखा है ।

"वामा वह पथ में हुई वाम सरितोपम् ।"

निराला जी का कहना था कि उन्होंने अपने जीवन में उनसे अधिक सुन्दर अन्य कोई स्त्री नहीं देखी थी । दाम्पत्य जीवन सुखमय था । किन्तु खान-पान के नाम पर कुछ अनबन हो गई । उन्होंने सत्याग्रह कर दिया और वह अपने मायके चली गई । एन्ट्रेंस की परीक्षा फेल होने के चलते इनके पिता ने अलग कर दिया । कुछ दिनों वाद पत्नी की फतहपुर से बीमारी का तार मिला । फौरन पहुंचे पर पत्नी चिता में जल चुकी थी । यह पहला कठिन आधात था, जिसकी दुखद स्मृति से निराला को कभी मुक्ति नहीं मिली । उस समय निराला जी महिषादल में थे । इस अनुभ्र वज्रपात ने निराला को झकझोर दिया । वह स्वदेश वापस लौट आए । मनोहरा देवी ने प्रथम पुत्र रामकृष्ण और पुत्री सरोज को जन्म दिया ।

पत्नी की मृत्यु से निराला विक्षिप्त-से हो गये । वह घण्टों श्मशान में बैठे सोचते थे । **'जुही की कली'** की प्रेरणा यहीं प्राप्त हुई थी । "माता का देहान्त निराला की जीवन-भित्ति की पहली दरार थी और वह दरार स्त्री के देहान्त से और भी स्फीत हो गई ।" पत्नी की मृत्यु के कुछ ही समय बाद ही निराला जी के पिता जी का भी देहान्त हो गया ।

अपने बच्चों को फतेहपुर छोड़ निराला गढारोला आए जहाँ भयानक महामारी फैली थी । कितने घर परिवार उजड़ गए । दु:खप्न चली जाती पर निराला के मन में राग और विराग का द्वन्द बराबर बना रहा । इस प्रकार इनके उपर गृहस्थी के भार को ढोने का उत्तरदायित्व आ गया । इस समय इनकी अवस्था इक्कीस वर्ष की थी । परन्तु इन विषय परिस्थितियों में निराला जी घवड़ाए नहीं और इन्होंने दृढतापूर्वक इनका सामना करने का निश्चय किया ।

नौकरी की खोज में वह पुन: महिषादल जाने को विवश हुए । वहां उन्हें रामकृष्ण परमहंस के शिष्य प्रेमानन्द से परिचय हुआ, जो द्वन्द के लिए कोई समाधान न था । एक उदान्त अनुभव व्यवस्था से सम्पर्क भर था । अव निराला को देश- काल की समस्याएं नए रूप में दिखाई दे रही थी । स्वाधीनता-संघर्ष से एक नया लगाव पैदा हुआ । इन दिनों इनकी काव्य-साधना भी चल रही थी और कवि रूप

१. **निराला काव्य पर बंगला प्रभाव** : डा. इन्द्रनाथ चौधरी में निराला को पर्याप्त प्रसिद्धि भी प्राप्त हो चुकी थी । बंगला कविताओं के कारण इनकी प्रसिद्धि वंग प्रदश में फैल गई थी । उधर पारिवारिक संकटों के कारण निराला के जीवन में एक प्रकार की अन्यमनयस्कता सी

भर गई थी । फलत: काम में कुछ शिथिलता होने लगी । अन्ततोगत्वा उन्हें नौकरी त्याग देना पड़ा और सन् १९२० में यह वापस अपने घर लौट आए । जीविका की समस्या ज्यों की त्यों बनी रही । उन्होंने कलम की मजदूरी का रास्ता पकड़ा । जो भी लिखने को मिलता वह लिखते और अपनी जीविका कमाते ।

निराला का आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी से परिचय हुआ और उन्हीं के प्रयत्न से इन्हें रामकृष्ण मिशन के दार्शनिक पत्र 'समन्वय' के सम्पादन का कार्य मिला । इन्होंने लगभग एक वर्ष भर कार्य सफलता एवं तन्मयता के साथ निभाया । इस पत्र में दार्शनिक विषयों पर अनेकों सुन्दर लेख लिखे, जिनके कारण इन्हें काफी प्रसिद्धि प्राप्त हुई । इन्हीं दिनों मुक्त छन्द में लिखित इनकी लम्बी कविता **'पंचवटी-प्रसंग'** प्रकाशित हुई । सन् १९२१ में इनका प्रथम निराला महादेव प्रसाद सेठ ने साहित्यिक सामाजिक एवं राष्ट्रीय जागरण के विचार से 'मतवाला' नामक साहित्यिक पत्र निकालने की योजना बनाई । निराला को इसका सम्पादक नियुक्त किया गया । बस यहीं **'मतवाला'** की तुक पर अपना उपनाम **'निराला'** रखा । इसी के माध्यम से अपने विचारों को स्वतन्त्रतापूर्वक व्यक्त किया । छायावाद का जन्म हो चुका था । आचार्य द्विवेदी तथा पं. रामचन्द्र शुक्ल जैसे महारथी छायावाद का विरोध कर रहे थे । 'मतवाला' के माध्यम से निराला ने इन चुनौतियों को स्वीकार किया तथा विरोधीयों को तर्क पूर्ण शैली एवं सशक्त भाषा में कठोर उत्तर दिया । एक प्रकार से यह समय निराला के जीवन का सुखमय था । इनकी दिनचर्या का वर्णन करते हुए डा. रामविलास शर्मा ने लिखा है-

"शाम को भांग छानना, दिन-भर सुरती फाँकना, थिएटर देखना, साहित्यिकों से वार्तालाप करना, मुक्त छन्द में कविता लिखना, छद्म नामों से आचार्यों की भाषा में व्याकरण और मुहावरों की भूलें दिखाना और समस्त हिन्दी संसार को चुनौती देना-उनके जीवन का कार्यक्रम था । आर्थिक संकट से विवश होकर यह लखनऊ चले गये और अपनी कलम के सहारे गुजर करने लगे ।"

सन् १९२८ में इनका सम्बन्ध **'सुधा'** नामक मासिक पत्रिका से हो गया, जिसमें इनकी रचनाओं का स्वागत किया गया । सन् १९२९ में वे दुलारेलाल भार्गव द्वारा संचालित गंगा-पुस्तक माला से सम्बद्ध हो गये, और यह उसमें काम करने लगे । इसी समय इनके दो उपन्यास **'अप्सरा'** और **'अलका'** प्रकाशित हुआ तथा एक कहानी- संग्रह **'लिली'** और

'परिमल' नामक काव्य-संग्रह का प्रकाशन हुआ । इस प्रवासकाल में निराला का सम्पर्क विश्व विद्यालय के अनेक छात्रों के साथ हुआ । इसमें डा. रामविलास शर्मा, डा. रामरतन भटनागर तथा 'अंचलन' प्रमुख है ।

निराला **'रंगीला'** नामक पत्र सन् १९३२ में सम्पादक होकर कलकत्ता गए । वहाँ उनका मन नहीं लगा और कुछ समय बाद ही वह पुन : लखनऊ लौटकर आ गए । इसके बाद दस वर्ष तक लखनऊ में उनका साहित्यिक-क्षेत्र वन गया । भार्गव जी से खट-पट होने के कारण निराला इलाहावाद चले गए । यहाँ लीडर प्रेस से इनकी कई काव्य रचनाएं प्रकाशित हुई । इन पुस्तकों में इनका मानसिक विक्षोभ प्रतिबिम्बित है । आर्थिक संकट निराला को बारम्बार घेरे रहा । इन दिनों यह जिस विपन्नास्था को प्राप्त हो गये थे, इसका चित्रण करते हुए श्री गंगाप्रसाद पाण्डेय ने लिखा है ।

कविताएँ लिए हुए वे प्राय : लीडरप्रेस और इण्डियन प्रेस तक दारागंज से पैदल ही आया-जाया करते थे ।

निराला ने अपनी प्रिय पुत्री सरोज का सन् १९३० में विवाह एक होनहार युवक के साथ कर दिया था । विवाह करते वक्त उन्होंने दहेज आदि के समस्त सामाजिक बन्धन तोड़ दिये थे । सरोज को सुखी देखकर निराला जी सुखी रहते थे । एकाएक सन् १९३५ में पुत्री सरोज का देहावसान हो गया । इस बज्रपात ने भावुक कवि को झकझोर दिया । इस अवसर पर उन्होंने एक शोक गीत- **'सरोज-स्मृति'** लिखा, जो हिन्दी साहित्य की एक अक्षुण्ण निधि मानी जाती है ।

महादेवी वर्मा ने प्रयाग में निराला जी को बुलाकर वहाँ रखा परन्तु कुछ समय उपरान्त वह वहाँ से भी चले गये और दारागंज मे रहने लगें । शुभ चिन्तकों एवं मित्रों का ताँता लगा रहता था । एक विद्वान् के शब्दों में, "विक्षिप्तता, विख्याति और स्वाभिमान तीनों के बीच मानों होड़ चल रही थी ।"

निराला जी के जीवन का निष्कर्ष **'सरोज स्मृति'** में लिखित ये पंक्तियाँ-

दुख ही जीवन की कथा रही,
क्या कहुं आज जो नहीं कहीं ।

कन्ये ! गत कर्मों का अर्पण,

करूँ करता में तेरा, तर्पण ।

निराला जी का शरीर क्रमशः क्षीण होता गया । १५ अगस्त सन् १९६१ को उनका 'स्वर्गवास' हो गया । इनकी मृत्यु पर समस्त हिन्दी संसार शोकाभिभूत हो गया ।

२.२ निराला का युग

सूर्यकान्त त्रिपाठी का व्यक्तित्व अत्यन्त ओजस्वी था । उनकी अधिकांश रचनाएँ ओजगुण से परिपूर्ण हैं । उदात्त उनकें काव्य का सहज स्वर है । दार्शनिक चिन्तन में, साहित्यिक वाद-विवाद में, व्यंग्य और माधुर्य में, करुणा और शोक में भी उनकी वाणी सामान्यतः उर्जा से प्रेरित रहती है । उनके साहित्य की यह विशेषता सिर्फ उनके व्यक्तित्व की देन नहीं है, उसका गहरा सम्बन्ध उनके युग से है ।

निराला ने लड़कपन में बंगभंग-विरोधी स्वदेशी आन्दोलन देखा, उन्होनें उन वीर युवको की कहानियाँ पढ़ी और सुनी जिन्होंने सशस्त्र क्रांति के द्वारा भारत को मुक्त करने के प्रयास में अपने प्राण दिए, उन्होंने सन् २० और ३० में स्वाधीनता आन्दोलन के नये उभार देखे जिनमें भारतीय जनता ने व्यापक रूप में भाग लिया । उन्होंने स्वयं अपने जिले के किसानो को संगठित करने में योग दिया और उनके संघर्षों का नेतृत्व किया । निराला भारतीय और विश्व राजनीति के बारे में जो सामग्री लिखते थे उसे ध्यान से पढ़ते थे, जो देखते-सुनते थे उससे पढ़ी हुई सामग्री की तुलना करते थे, फिर अंग्रेजी राज और जनता के बारे में अपने निष्कर्ष निकालते थे और यही कारण रहा कि स्वाधीनता प्रेम उनके साहित्य की प्रेरणा बनी ।

हिन्दी कथा साहित्य में बहुत बार क्रान्तिकारी वीरों का चित्रण किया गया है । निराला ने भी अपने काव्य और, कथा-साहित्य में क्रान्तिकारियों का चित्रण किया है । दोनों में अन्तर यह है कि निराला के क्रन्तिकारियों का क्षेत्र हमेशा गाँव होता है । क्रान्ति की सार्थकता है किसानो की मुक्ति में । अंग्रेजी राज और जमीन्दारी शासन के उत्पीड़न से जो किसान को मुक्त करे वही सच्चा क्रान्तिकारी है । निराला ने 'बादल राग (१९२४) में किसान और विप्लवी वीर के सम्बन्ध पर लिखा था ,

"जीर्ण बाहु, है शीर्ण शरीर
तुझे बुलाता कृषक अधीर
ऐ विप्लव के वीर ।"

जाति-पाति, ऊँच-नीच का भेदभाव सामन्ती व्यवस्था की देन थी । अंग्रेजी जब सामन्ती व्यवस्था को पाल रहे थे, उसे अपनी राजसत्ता का मुख्य सामाजिक आधार बना रहे थे, तब जाति-पाति का भेदभाव कैसे मिटता ? अंग्रेजी राज में उसे नया जीवन मिला, टूटती हुई सामाजिक रुढ़ियाँ एक बार फिर मजबूत हुई । जमीन्दार शुद्रों की बेगार से लाभ उठा रहे थे । जमींदारों के संरक्षक अंग्रेजी थे इसलिए ऊंचनीच के भेद भाव को दृढ़ करने वाले ये अंग्रेज ही थे । उनके शासन में देशी सामन्त और विदेशी पूँजीपति के दोहरे शोषण से भारत की निम्न जातियाँ भयानक रूप से त्रस्त हो उठी । उनके इस त्रास ने निराला के मर्म को छुआ और उनकी समस्त करुणा इन दीन-जनों के लिए प्रवाहित हो उठी थी ।

समाज में दि्वज और शुद्र का भेद उत्पन्न हुआ, तब उसके साथ ही स्त्री पुरुष में छोटे बड़े का भेद भी पैदा हुआ । सामाजिक रुढ़ियाँ जिस तरह शुद्रो को दास बनाए हुए थी, वैसे ही वे स्त्रियों की पराधीनता का कारण भी थी । निराला ने लिखा, "प्राचीन शीर्णता ने नवीन भारत की शक्ति को मृत्यु की ही तरह घेर रखा है । घर की छोटी सी सीमा में बँधी हुई स्त्रियाँ आज अपने अधिकार, अपने गौरव, देश तथा समाज के प्रति अपना कर्तव्य सब कुछ भूली हुई हैं ।" (प्रबन्ध प्रतिभा, पृ. १३१) समाज में ऊँच-नीच का भेद मिटाना निराला के लिए एक राजनीतिक कर्तव्य था, उसी तरह नारी के समान अधिकारों का संघर्ष स्वाधीनता-आन्दोलन का अभिन्न अंग था । शिक्षा के अभाव में समाज के भीतर अनेक कुरीतियाँ प्रचलित थीं जिनसे सबसे अधिक हानि स्त्रियों की होती थी । पर्दा-प्रथा, बाल विवाह आदि ऐसी ही कुरीतियाँ थीं । निराला ने अन्य हिन्दी साहित्यकारों की तरह इनका विरोध किया ।

समाज में स्त्रियों और शुद्रों को पराधीन बनाए रखने के लिए प्राचीन रुढ़ियों के समर्थक बात-बात में वेद पुराण, रामायण, महाभारत और शास्त्रों का हवाला देते थे । उनके तर्क ऐसे होते थे मानो इस विशाल साहित्य की रचना स्त्रियों और शूद्रो को गुलाम बनाए रखने के लिए ही हुई है । दि्वजों की तुलना में शुद्रों और पुरुषों की तुलना में स्त्रियों को नीचा दिखाने के लिए समाज मे तरह-तरह के कर्मकाण्ड प्रचलित थे । लोग इन्हीं को

धर्म मानने लगे थे । निराला ने कर्म काण्ड और धर्म में भेद किया । उन्होने कहा कि कर्म वही श्रेष्ठ है, जो ज्ञानजन्य है, अज्ञानजन्य कर्म रुढ़ि का पालन मात्र है ।

यूरोप में अठारहवीं सदी के अनेक दार्शनिकों ने धार्मिक अन्धविश्वास की तीव्र आलोचना की थी । भारत की तुलना में धार्मिक कट्टरता वहाँ ज्यादा ही थी । फिर भी सोलहवीं सदी से लेकर उन्नीसवीं सदी तक निरन्तर संघर्ष और विज्ञान की प्रगति के कारण बीसवीं सदी में स्थिति काफी बदल गई थी । भारत में सामन्ती व्यवस्था जितनी प्राचीन थी, शास्त्रीयता का जोर भी यहाँ उतना ही ज्यादा था । अनेक सांस्कृतिक आन्दोलनों के बावजुद रुढ़िवाद की जड़ें समाज में बहुत गहरे जमी हुई थी । शास्त्रों पुराणो काव्यों ऐतिहासिक परम्पराओं का उपयोग पुरुष अपने ढंग से, पुरानी अधिकार व्यवस्था की रक्षा के लिए करते थे । स्त्री भी उनका उपयोग अपने ढंग से, अधिकारों में समानता के लिए कर सकती है, यह लोगों को पसन्द नहीं था । निराला ने इस मिथ्या नैतिकता की जमकर आलोचना और विरोध किया ।

निराला की क्रान्तिकारी विचारधारा का श्रोत था वेदान्त । नवीं सदी के आरम्भ में महान दार्शनिक शंकराचार्य ने भारतीय चिंतन में भारी क्रान्ति की । यह संसार माया है, जैसा दिखाई देता है, वैसा नहीं है, ब्रह्म मनुष्य के भीतर है, स्वर्ग में बैठा हुआ जगत् का संचालन करने वाला कोई परम पिता नहीं है । प्रसिद्ध है कि शंकरचार्य ने बौद्धों का प्रतिवाद किया किन्तु वास्तव मे उतना ही विरोध उन्होंने ब्राहम्णों के कर्मकाण्ड का भी किया ।

निराला के चिंतन में ज्ञान का महत्व है । अज्ञान का अर्थ है दुर्वलता, पराधीनता । ज्ञान का अर्थ है शक्ति स्वाधीनता । उसका श्रोत है वेदान्त । सामाजिक व्यवहार के लिए उसका सारतत्व है मनुष्य मात्र की समानता । निराला का मानवतावाद प्राचीन रुढ़ियाँ और अन्धविश्वासों को निर्मूल करने, समाज को नए सिरे से गठित करने में सक्षम था । सांस्कृतिक क्षेत्र में वह जिस क्रान्ति के अग्रदूत थे, उसका आधार था वेदान्त ।

ये था निराला का युग । हर सजग साहित्यकार की भाति निराला पूर्णरुपेण अपने युग से प्रभावित थे । उनकी रचनाओं में उनका युग बोलता था और सामाजिक व्यवस्था उनकी कृतियों मे उभर कर सामने आई । यह उनका समय ही था जिसने उन्हें ओजस्वी कवि बनाया ।

२.३ छायावाद

छायावाद का आरम्भ सन् १९१८ में और अन्त १९३८ में माना जाता है । वर्ष विशेष से किसी साहित्यिक युग का आरम्भ मानने के बारे में थोड़ा बहुत मतभेद हो सकता है । इन दोनों सीमाओं का आधार इन वर्षों की या इनके आसपास-दो-चार साल पहले या दो-चार साल बाद की रचनाएँ होती हैं और इसलिए दोनों छोरों को दो-चार साल इधर या उधर सरकाया जा सकता है । सन् १९१८ को ही छायावाद की आरम्भिक सीमा मानने का कारण यह है कि छायावाद की पद्धति की रचनाएं इसके आसपास प्रकाशित होने लगी थीं । निराला के कुछ कविताओं की रचना भी १९२० ई. के आसपास हो चुकी थी । इसलिए यह स्पष्ट है कि इस काल के आसपास साहित्य में एक नये मोड़ का आरम्भ हो गया था, जो पुरानी काव्य-पद्धति को छोड़कर एक नयी पद्धति के निर्माण का सूचक था । सन् १९३५ में छायावादी काव्य-चेतना को मूर्तिमान् करने वाली कृति **'कामायनी'** का प्रकाशन हुआ । इस काल के छायावादी कवि स्वयं भी अपने छायावादी भावबोध का अतिक्रमण करने का प्रयास कर रहे थे । पन्त के **युगान्त** (१९३६) और निराला की **'अनामिका'** (१९३८) में अनेक ऐसी रचनाएँ संकलित हैं जो छायावादी संसार से आगे बढकर एक ठोस यथार्थ के निकट आने का प्रयास कर रही थीं । यह साहित्यिक परिवर्तन कहाँ तक उक्त राजनीतिक परिवर्तन और उससे उत्पन्न सामूहिक चेतना के परिवर्तन से सम्बद्ध है, यह अध्ययन काफी महत्वपूर्ण और रोचक है । वैसे, यह स्पष्ट है कि सन् १०३८ के आसपास छायावादी काव्यधारा क्षीण होकर एक नये प्रकार के काव्य के आगमन की सूचना दे रही थी । इसलिए १९३८ ई. को छायावाद-युग की आखिरी सीमा माना जा सकता है ।

छायावाद के प्रारम्भ के आस-पास में घटित होने वाली दो घटनाएँ महत्वपूर्ण हैं - महायुद्ध में होने वाले संहार का भयावह तथा जलियाँवाले बाग का हत्याकाण्ड । प्रथम के फलस्वरूप विज्ञान के प्रति आस्था हिल उठी और चिन्तन-पद्धति परोक्ष सत्ता के प्रति उन्मुख होकर रहस्यात्मक हो गई । जलियाँवाले बाग एवं रौलेट ऐक्ट जैसी घटनाओं ने भारतीय जन-समाज को निराशा से भर दिया । फलत : भावुक प्रबुद्ध व्यक्तियों की वृत्ति अन्तर्मुखी हो गई । वे यथार्थ जगत् के स्थान पर कल्पनालोक में अपने आदर्शों की पूर्ति का सुख-स्वप्न देखने लगे थे । उनका यथार्थ जीवन निराशा और वेदना की कहानी बन गया । इसी बात को डा. राम विलास शर्मा ने साम्यवादी परिवेश में इस प्रकार कहा है-

"छायावाद स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह नहीं रहा, वरन, थोथी नैतिकता, रुढ़िवाद, और सामन्ती साम्राज्यवादी बन्धनों के प्रति विद्रोह रहा है । परन्तु यह विद्रोह मध्यवर्ग के तत्वाधान में हुआ था । इसलिए इसके साथ मध्यमवर्गीय असंगति, पराजय और पलायन की भावना भी जुड़ी हुई है ।"

इन्हीं दिनों राजनीतिक आन्दोलन अंग्रेजी शासन को जड़-मूल से समाप्त करना चाहता था । सामाजिक आन्दोलन धार्मिक एवं सामाजिक रुढ़ियों को समाप्त करने पर तुले थे । इन सबका समग्र प्रभाव यह पड़ा कि काव्य के क्षेत्र में स्वच्छन्दतावाद का समावेश हो गया । फलतः १९ वीं शताब्दी के अंग्रेजी रोमाण्टिक साहित्य ने हमारे तरुण भावुक कवियों को प्रभावित किया और अंग्रेजी के रोमाण्टिक कवियों की शैली पर काव्य-प्रणयन का सूत्रपात हुआ । हिन्दी कवि स्वतन्त्रता आन्दोलन की विफलता से उत्पन्न वेदना एवं निराशा द्वारा पीड़ित थे । पाश्चात्य चिन्तन के साथ जनतन्त्र के भाव आये थे । और व्यक्ति एकदम अत्यधिक महत्वपूर्ण बन गया था । छायावाद के कवियों के काव्य में अभिव्यक्त वैयक्तिकता को इसी जनतन्त्रतात्मक स्वातन्त्र का परिणाम समझना चाहिए ।

सामाजिक आन्दोलनों ने नारी-उत्थान, नारी-सम्मान और नारी स्वातन्त्र के भाव जागरण कर दिए थे । छायावाद के युग में नारी को विभिन्न रूपों में देखने की जो प्रवृत्ति है, उसके पीछे नारी के प्रति सहानुभूति एवं नारी को प्रेयसी के रूप में देखने की मनोवृत्ति की प्रधानता माननी चाहिए ।

नारी प्रकृति और प्रेम की त्रिवेणी भावुक हृदय की प्रेयसी रही है । छायावाद के कवि ने भी प्रेम की अभिव्यक्ति के लिए जहाँ नारी की ओर देखा, वहाँ उसके रहस्यात्मक अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए नारी को अपना माध्यम बना लिया । दाम्पत्य स्नेह द्वारा रहस्य भावना की अभिव्यक्ति अत्यन्त प्राचीन परम्परा है ।

इस प्रकार छायावाद के अन्तर्गत नारी, प्रकृति और परोक्ष सत्ता परस्पर इतने घुले-मिले हैं कि सर्वत्र इन्हें पृथक, करना सम्भव नहीं है ।

'छायावाद' का जन्म युगीन परिस्थितियों की देन है । अंग्रेजी काव्य से प्रभावित होकर उसने वह रूप धारण किया जो किसी सीमा तक पाश्चात्य है । छायावादी काव्य अपने आप में सम्पूर्ण मानव-जीवन एवं सम-समायिक चिन्तन को समेट कर चला है ।

राजनीति के क्षेत्र में फ्रांस की क्रान्ति तथा सामाजिक क्षेत्र में इंग्लैंड की औद्योगिक क्रान्ति रोमाण्टिक काव्य की प्रमुख प्रेरणाएँ है । साहित्य के क्षेत्र में इंग्लैण्ड और स्काट लैण्ड के कतिपय प्रभावशाली कवियों के काव्य की नवीन बाधाएँ विशेष प्रेरणाप्रद सिद्ध हुईं । इन कवियों ने व्यक्तिगत आहलाद और विषाद की अभिव्यक्ति की, तथा प्राचीन आख्यानक गीत लिखकर अतीत के प्रति विशेष मोह उत्पन्न किया इनमें वार्टन, वर्णन और पर्सी के नाम उल्लेखनीय हैं ।

वर्डसवर्थ और कालरिज ने स्न १८७८ में शास्त्रीय ढंग की काव्य-परम्परा के परित्याग एवं वैयक्तिकता को अनवरुद्ध अभिव्यक्ति का क्रम प्रारम्भ किया । १८ वीं शताब्दी की काव्य-भाषा का परित्याग किया तथा प्रतीकों और बिम्बों का नवीन रुप प्रस्तुत किया । उनकी भाषा से संगीतात्मकता, चित्रात्मकता और व्यंजकता का विशेषतः समावेश हुआ ।

हिन्दी कविता में रोमाण्टिक विद्रोह का आरम्भ करने वाले जयशंकर प्रसाद थे । प्रकाशित **'इन्दु'** लेख में उन्होंने काव्य-रचना के लिए व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति आवश्यक बताई । उनकी रचनाएँ झरना, **आँसू, लहर** और **'कामायनी'** इसी विचारधारा के व्यवहारिक रूप हैं । इनमें द्विवेदी-युगीन बुद्धिवादिता का अभाव है तथा मस्तिष्क की अपेक्षा हृदय को कहीं अधिक महत्व प्रदान किया गया है ।

'गीतिका' के अन्तर्गत सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' ने काव्य की बन्धनमयता की छोटी राह छोड़ कर चलने का प्रतिपालन किया । निराला की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति का रूप था-

आज हो गए ढीले बन्धन,
मुक्त हो गए प्राण ।
× × ×
नव जीवन की प्रबल उमंग

जा रही हैं मिलने के लिए
पार कर सीमा ।
प्रियतम असीमा के संग ।

सुमित्रानन्दन पन्त ने छायावाद का घोषणापत्र (Manifesto) में प्रस्तुत किया था । इस अर्थ में वह 'छायावाद' के प्रवर्त्तक हैं । पन्त की रचनाओं में अंग्रेजी के रोमाण्टिक कवि शैली का गहरा प्रभाव है । शैली के अनुसार समय का अवगुण्ठन विश्व के उत्कर्ष विधान में बाधक है । इस अवगुण्ठन का निवारण होते ही वसुधा पर स्नेह और प्रेम का साम्राज्य स्थापित हो जायगा । **'पल्लविनी'** तथा **'गुंजन'** की अनेक कविताओं में उक्त विचारधारा की अभिव्यक्ति हुई है । **'ज्योत्सना'** में कवि ने शरीर से आत्मा की ओर ले जाकर संसार में सुख-शान्ति स्थापित करने का सुख-स्वप्न देखा है । इस प्रकार पन्त द्वारा प्रवर्तित 'छायावाद' एक आदर्शवादी काव्य-धारा है, जिसमें वैयक्तिकता, रहस्यात्मकता तथा प्रेम की सबल अभिव्यक्ति प्राप्त हुई है ।

छायावाद काव्य में प्रतिकात्मकता तथा कल्पना का रूप इतना अधिक था कि वह प्रायः क्लिष्ट और दुर्बोध बन गया इसके अतिरिक्त छायावाद की चेतना अधिकांशतः बहिर्जगत के प्रति उन्मुख होकर अन्तर्मुखी ही रही । छायावाद का दृष्टिकोण वैज्ञानिक न होकर अधिकांशत भावात्मक रहा और वह युग की तेजी से बदलती हुई संघर्षपूर्ण परिस्थितियों में स्वस्थ जीवन-दर्शन प्रदान नहीं कर सका अभाव पक्ष के प्रति छायावादी कवि भी सजग थे । निराला जी इस कल्पनाश्रित काव्यवृत्ति को त्याग यथार्थ के प्रति झुक गए थे । जागरुक व्यक्ति यह अनुभव करने लगे थे कि **कितनी चिड़ियाँ उड़े अकास/ दाना है** धरती के पास ।"

इन्हीं समस्त कारणवश 'छायावाद' अधिक समय तक जीवित न रह सका और उसकी राख पर प्रगतिवाद उठकर खड़ा हो गया ।

कवियों ने अपने काव्य में समाज-चित्रण की अपेक्षा अपने व्यक्तिगत हर्ष-विवाद को ही प्रधानता दी है । 'प्रसाद' ने **'आँसू'** में अपने वियोग-विगलित हृदय के अश्रु बहाया है, पन्त ने **'ग्रन्थि'** में अपने मन की गाँठ खोलकर रखी है तथा महादेवी वर्मा ने अपनी व्यक्तिगत वेदना के संसार को विविध रंगों में रंग कर प्रस्तुत किया है । निरालाजी के काव्य

में भी वैयक्तिकता को अभिव्यक्ति मिली है । इन्होंने अपनी आन्तरिक अनुभूति को **'अपरा'** की कई कविताओं में व्यक्त किया है । **जुही की कली**, हिन्दी के सुमनों के प्रति, में अकेला, **राम की शक्तिपूजा**, **विफल बासना**, **स्नेह निर्झर** वह गया **है, सरोज-स्मृति** आदि अनेक अपनी सुख-दु:खमयी अनुभूति को ही मुखर किया है । जिस प्रकार द्विवेदी युगीन कविता में सृष्टि की व्यापकता और अनेकरूपता को समेटने का प्रयास है उसी प्रकार छायावादी काव्य में मनोजगत् की गहराई को वाणी में सँजोने का प्रयत्न किया गया है । मनोजगत् का सत्य सूक्ष्म होता है जिसे सृजना द्वारा साकार करने के लिए छायावादी कवियों ने उर्वरा कल्पना-शक्ति का उपयोग किया है । कल्पना का उपयोग अनुभूति के विविध पक्षों और प्रसंगों की उद्‌भावना मे भी किया गया है और उन्हें व्यक्त करनेवाले प्रतीकों तथा बिम्वों की सर्जना में भी है । इसीलिए छायावादी अभिव्यंजना-पद्धति विशिष्ट और सांकेतिक हो गयी है ।

छायावादी कवियों ने प्रधान रूप से प्रणय की अनुभूति को व्यक्त किया है । इनकी कविताओं में प्रणय से सम्बद्ध विविध मानसिक अवस्थाओं का आशा, आकुलता, आवेग, तल्लीनता, निराशा, पीडा, अतृप्ति, स्मृति, विषाद आदि का अभिनव एवं मार्मिक चित्रण मिलता है ।

काव्य-रूपों की दृष्टि से भी छायावादी काव्य अत्यन्त समृद्ध है । एक और उसमें गीतों और मुक्त छन्द की कविताओं की अधिकता है, तो दूसरी और 'आँसू' एवं 'तुलसीदास' जैसे खण्डकाव्य भी मिलते हैं और 'कामायनी' महाकाव्य में तो छायावादी संवेदना अपनी समग्रता में मूर्तिमान दिखायी देते हैं । इनके अतिरिक्त **'राम की शक्तिपूजा'** (निराला) **'प्रलय की छाया में'** (प्रसाद) और **'परिवर्तन'** (पन्त) जैसी लम्बी कविताएँ भी मिलती हैं । अभिव्यञ्जना की सांस्कृतिकता और वक्रता भी छायावादी कवियों की उल्लेखनीय उपलब्धि है ।

विशेषत: निराला छायावाद के प्रतिनिधि कवि हैं । वह छायावादी कवियों में अग्रणीय हैं । इन्होंने छायावादी भाषा को नूतन पदावली देकर उसके भण्डार को समृद्ध किया तथा भाषा को गूढ़तम भावों की अभिव्यक्ति को वहन करने की शक्ति प्रदान की है । प्रस्तुत-विधान को परम्परा के बन्धनों से मुक्त किया है । नवीन अलंकारों की योजना की है तथा भाषा को ध्वन्यात्मक एवं संगीतात्मक वनाया है । मुक्त छन्द के तो वह अग्रदूत हैं ही । सारांश यह है कि निराला ने नवीन दिशा और नवीन शक्ति देकर छायावाद को प्राणवान

बनाया है । कविताओं में हमें निराला जी की वैयक्तिक भावनाओं की सफल अभिव्यक्ति मिलती है । यह अभिव्यक्ति दो प्रकार से की गई है प्रत्यक्ष विधि से तथा अप्रत्यक्ष विधि से । **'विफल वासना'** की ये पंक्तियाँ प्रत्यक्ष विधि से वैयक्तिक मनोभाव की अभिव्यक्ति का सुन्दर उदाहरण हैं ।

तुम्हे कैसे प्रिय बतलाऊँ मैं ?
वैसे ही मैंने अपना सर्वस्व गँवाया,
रुप और यौवन चिन्ता में, पर क्या पाया ?
प्रेम ! हाय आशा का वह भी स्वप्न एक था,
विफल-हृदय तो आज दुख ही दुख देखता ।

निराला जी ने **'राम की शक्ति पूजा'** में राम के माध्यम से परोक्ष विधि से अपने ही संघर्षपूर्ण जीवन की भर्त्सना है ।

धिक् जीवन जो पाता ही आता है विरोध ।

धिक् साधन जिनके लिए सदा ही किया शोध ।

अतएव स्पष्ट है कि 'अपरा' की कई कविताओं में निराला ने वैयक्तिक आन्तरिक अनुभूति की अभिव्यक्ति की है ।

प्रत्येक छायावादी कवि के काव्य में हमको सामाजिक चेतना के दर्शन होते हैं । निराला चाहते हैं कि सामाज का प्रत्येक प्राणी सुखी हो । अपने प्रसिद्ध वन्दना-गीत **'वर दे वीणा वादिनी वरदे'** में प्रार्थना की है कि मानव-समाज में नवीन शक्तियों का आविर्भाव हो, जिससे प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्तव्य का पालन कर सकें ।

वेदना, दु:खवाद एवं करुणा की विवृत्ति की अभिव्यक्ति छायावाद की एक प्रमुख विशेषता है । ये कवि वेदना पूर्व दु:ख को जीवन का सर्वस्व एवं उपकारक मानते है । 'प्रसाद' की **'आँसू'** के माध्यम से कवि की वेदना शतशहस्र धारओं में प्रवाहित हुई है । महादेवी जी ने अपने आपको **'नीर-भरी दुख की बदली'** ही कहा है । 'निराला जी ने भी वेदना एवं दु:खवाद को कई प्रकार से प्रकट किया है । और एक बात 'छायावाद' शब्द के

अर्थ को लेकर आलोचना-गगन में काफी विवाद रहा है । इसका कारण यह है कि जहाँ यथार्थवाद, आदर्शवाद, प्रगतिवाद आदि ऐसे नाम हैं जिनके आधार पर इन वादों के अन्तर्गत स्वीकृत रचनाओं के बुनियादी स्वरुप को आसानी से ऐसे स्पष्ट अर्थ का बोध नहीं करना जिसके आधार पर छायावादी काव्य की विशेषताओं को समीक्षा जा सके । हो सकता है कि आरम्भ में 'छाया' से अस्पष्टता की व्यंजना अभिप्रेत रही हो, किन्तु यह इसलिए 'छायावाद' के अर्थ को समझने के लिए हमें असमर्थ है । इसलिए 'छायावाद' के अर्थ को समझने के लिए हमें उन प्रवृत्तियों को जानने का प्रयास करना होगा जो छायावादी काव्य में पायी जाती है । जहाँ यथार्थवाद, प्रगतिवाद, आदि काव्यधाराओं को विवेचन में यथार्थ, प्रगति आदि के अर्थ से सहायता ली जाती है वहाँ छायावादी के अर्थ को समझने के लिए विपरीत दिशा में चलना होगा नामवाचक शब्द मे अर्थ से काव्यगत विशेषताओं की ओर जाने के स्थान पर काव्य की विशेषताओ से नामवाचक शब्द के अर्थ-निवारण का प्रयास करना होगा । लेकिन 'छायावाद' को जो अर्थ आरम्भ में निर्धारित किये गये, उनमें 'छाया' शब्द के अर्थ को समझने की ही कोशिश की गयी । उदाहरणार्थ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इनका सम्वन्ध अंग्रेजी के शब्द 'फैन्टेमैस्टा' से जोड़ने का प्रयास किया तो प्रसाद जी ने इसे 'विच्छित्ति' या 'मोती की सी तरलता' से सम्बद्ध किया । लेकिन आज इन मान्यताओं का केवल ऐतिहासिक महत्व है ।

छायावादी काव्य की अभिव्यंजना-पद्धति भी नवीनता और ताजगी लिये हुए है । काव्य के मूल स्वरूप को समझने के लिए उसे ऐतिहासिक सन्दर्भ में रखकर देखना अनिवार्य है । द्विवेदीयुगीन काव्य विषयनिष्ठ, वर्णन प्रधान और स्थूल था । इसके विपरीत छायावादी काव्य व्यक्तिनिष्ठ और कल्पना प्रधान है ।

२.४ छायावादी कवि

क) जयशंकर प्रसाद

छायावादी युग मे अनेक ऐसे कवि हुए जिनकी रचनाओ में आधुनिक हिन्दी साहित्य को गौरव प्राप्त हुआ है । इनकी रचनाओं में प्रयासहीन स्वच्छन्दतावादी भावनाएँ व्यक्त हुई है । इन कवियों मे सर्वप्रथम उल्लेखनीय कवि श्री जयशंकर प्रसाद हैं । उनकी प्रारम्भिक रचनाओं में प्रेमी हृदय की पुकार और विशव की विशालता में परम हृदय

झलकता है । उनमें प्रकृति प्रेम और जिज्ञासा की भावना है । पार्थिव सौन्दर्य के प्रति प्रारम्भ से ही वे आकृष्ट हुए और उनके जीवन में सौन्दर्य और जीवन की उद्‌ाम लीला को उन्होंने दिव्य भावना से मंडित कर प्रकट किया प्रसाद की जीवन के प्रति एक बौद्धिक धारणा थी, जो जीवन कल्याण के लिए आवश्यक सी बन गई थी । उनके जीवन की उठान ही ऐसी थी कि उसमें प्यास के साथ ही संतोष और संघर्ष के साथ ही एक निष्क्रियता या निस्संगता के दर्शन होते है । जीवन के प्रति आकर्षण होते हुए भी कवि में एक तटस्थ वृत्ति है । उनके काव्य में मानवीय सुषमा तो है, पर उनका स्व अलग ही रहता है । उस समय उनकी वासनाएँ प्रेम हो जाती है रमणीयता चिर सौन्दर्य वन जाती है । उनका प्रकृति दर्शन मानव-सापेक्ष होने से उनका काव्य मानव के रुप वर्णन से भरा हुआ है । सबसे बड़ी बात यह है कि जहाँ उनका रूप वर्णन अत्यन्त वैभव एवम् विलास के वातावरण से घिरा हुआ मांसल है, वहाँ भी अश्लीलता नहीं आने पाई । उनका काव्य, रूप के श्रेष्ठतम चित्रों से भरा हुआ है । कहीं-कहीं अलंकृतपद योजना द्वारा मानव-सापेक्ष प्रकृति चित्र अत्यन्त सुन्दर बन पड़े हैं बीत विभावरी जाग री । कवि के पीछे सर्वत्र यौवनका चिर ममत्व साथ-साथ चलता है । परन्तु यह ममत्व संकुचित अथवा भावात्मक नहीं है । उसके मूल में कवि का अतिमानवीय रुप जीवन की साधना और वास्तविकता है । इसलिए उनमें प्रेम और त्याग अधिकार और आत्म-विसर्जन, भोग और निग्रह दोनो ही बातें पाई जाती है । कवि वर्तमान मे रह सकने मे असमर्थ था । साथ ही अतीत भी उसके निकट वर्तमान ही बना रहा । फलतः करुणा और विषाद से भरी रचनाओं मे भी अलंकृत वैभव की पार्श्व-भूमि है । विविध रंगीनियों में भी कवि जीवन की निश्चल ज्योति लिए खड़ा है । वह स्थिर है, उसमे बौद्धिक निस्संगता है । कवि प्रसाद के गीतों में भावना एवम् अनुभूति की मृदुता और मानव-जीवन के उत्कर्ष का गौरव है । उनकी अनुभूतियों में मनोनिवेश है, आत्मसंवेदन है, प्रसाद गुण है और कल्पना भावना एवम् अनुभूति का समन्वय है । उनके गीतों में दार्शनिक और आध्यात्मिक संकेत है, मानव जीवन के साथ प्रति पग पर मानव की अनुचरी प्रकृति का सामंजस्य है । उनमे शब्दों की मृदुलता, ध्वन्यात्मकता और संगीतात्मकता है । इन सबके बाद उनमें जीवन का तत्व-ज्ञान है । उनके विरह में कटुता नहीं । वह तो आत्मा को बल देने वाले है । उनकी भाषा पुष्ट और परिमार्जित है । उस पर उनके चिन्तन मनन और अनुभूति की पूरी छाप है **आँसू, करुणालय, कानन कुसुम, कामायनी, चित्राधार, झरना, प्रेम पथिक, महाराणा का महत्व, लहर** आदि इनकी प्रमुख कृतियाँ है ।

ख) सुमित्रानन्दन पंत

सुमित्रानन्दन पंत प्रकृति के गोद में पले-बढे, शायद इसलिए इन्हें प्रकृति का सुकुमार कवि कहा गया । उन्होंने स्वयं लिखा है, कविता की प्रेरणा मुझे सबसे पहले प्रकृति निरीक्षण से मिली है जिसका श्रेय मेरी जन्मभूमि कूर्माञ्चल प्रदेश को है । कवि जीवन से पहले भी मुझे याद है, घण्टों एकान्त में बैठा, प्राकृतिक दृश्यों को एकटक देखा करता था । और यह शायद पर्वत प्रान्त के वातावरण ही का प्रभाव है कि मेरे भीतर विश्व और जीवन के प्रति एक गम्भीर आश्चर्य की भावना, पर्वत की तरह, निश्चय रुप से अवस्थित है । प्रकृति के साहचर्य ने जहाँ एक ओर मुझे सौंदर्य स्वप्न और कल्पनाजीवी बनाया, वहाँ दूसरी ओर जनभीरु भी बना दिया । वास्तव में पंत जी आधुनिक युग में प्रकृति की रमणीयता पर मुग्ध होने वाले सबसे अधिक भावुक कवि हैं । प्रकृति के नाना व्यापारों में उन्हें कवि-सच्चे अर्थो में छायावादी कवि है । उन्होंने प्रकृति में एक शक्ति और रहस्य देखा जहाँ कहीं उन्होंने प्रकृति को मानवीकरण से निरपेक्ष रहकर चित्रित किया है, वहाँ बहुत ही रमणीय दृश्य-विधान उपस्थित हो गया है । प्रकृति प्रेम के अतिरिक्त उन्होंने स्वामी विवेकानन्द और रामतीर्थ के अध्ययन से अपने प्रकृति दर्शन के ज्ञान और विश्वास की अभिवृद्धि की है । परिवर्तन मे वे उनके वेदान्त सिद्धान्तो से प्रभावित हुए है । यूरोपीयन कवियों और रवीन्द्रनाथ द्वारा ग्रहीत सौन्दर्य-भावना से भी पंत जी ने प्रेरणा ग्रहण की है । राष्ट्रीय नव जागरण ने भी पंत जी को प्रभावित किया और युगान्त ग्राम्या, युगवाणी आदि में वे प्रकृति से मानवतावाद की ओर आकृष्ट हुए । लोग उन्हें साम्यवादी और प्रगतिवादी पुकारने लगे । सच तो यह है कि उन्होंने अपने को किसी राजनीतिक वाद के खूँटे से न बाँध कर भौतिकता और आध्यात्मिक चेतना का, मार्क्स और गांधी का समन्वय उपस्थित करने की चेष्टा की । कवि होने के नाते मानवतावाद उनमें प्रारम्भ से ही था । जाग्रत कवि की तरह उन्होंने युग-कर्म के अनुकूल परिस्थितियों का अनुशरण किया । मानव जीवन में जो रुढिग्रस्त और जीर्ण-शीर्ण हैं उसका वे संहार करना चाहते थे । स्वर्ण किरण, स्वर्ण चूलि, गीत अगीत आदि रचनाओं में वे श्री अरविद की विचार धारा से प्रभावित होकर अध्यात्मवाद की ओर झुके हैं और विश्व मानव और विश्व संस्कृति के उत्थान का विश्व चेतना का आशापूर्ण संदेश देते हैं । इस विशाल सांस्कृतिक उत्थान में वे मानवता का स्वर्ण प्रभात देखते हैं । वास्तव में पंत जी के छायावाद वाले रुप से लेकर आध्यात्मिक उल्लास वाले वर्तमान रूप तक बराबर एकसूत्रता मिलती है । अंतर केवल इतना है कि जो रुप

पहले गौण था, वह अब प्रधान हो गया है । और सबमे उनका व्यक्तिवादी रूप ही व्यक्त हुआ है । पंत जी की गीति रचनाओं मे अनुभूति की तीव्रता उतनी नहीं पाई जाती, जितना उनमें कल्पना का प्रसार है । क्षणिक तथा क्षीण, अनुभूति को भी कल्पना के सहारे रमणीय बना देने की कला में पंतजी प्रवीण हैं, किन्तु अपनी इस कला के साथ-साथ यदि उसमें उनके हृदय का भी योग होता तो वास्तव में पंत जी एक अद्वितीय कवि होते । खड़ी बोली की शक्ति का विकास करने में पंत जी का बड़ा हाथ है । उनका भाषाशिल्प गौरव की वस्तु है । वह चित्रमय, सस्वर, संगीतमय है, उसमे पूर्ण व्यंजनाशक्ति और ध्वन्यात्मकता है । उन्होंने भाषा को रुचिरता और सौन्दर्य-श्री प्रदान की ।

ग. महादेवी वर्मा जी छायावादियो में एक मात्र वह चिरन्तन भाव यौवना कवयित्री हैं, जिन्होंने नये युग के परिप्रेक्ष्य में राग तत्व के गूढ़ संवेदन तथा राग मूल्य को अधिक मर्मस्पर्शी, गम्भीर, अन्तर्मुखी तीव्र संवेदनात्मक अभिव्यक्ति दी है । जिसका कारण स्पष्टत: उनका नारी व्यक्तित्व ही है । इसका सम्बन्ध उनके निजी व्यक्तिगत जीवन से उतना नही है । उनका व्यक्तिगत जीवन सामाजिक दृष्टि से तथा स्वभाव से भी सन्तुलित ही रहा है । वह एक सम्पन्न घर में पैदा हुई । उनके माता पिता तथा परिवार का वातावरण भी शिक्षित संस्कृत ही रहा । उनकी स्वतन्त्र व्यक्तिगत आकांक्षाओ की पूर्ति में भी कोई ऐसी दुर्लध्य व्यवधान या बाधाएँ नही उपस्थित हुई । फिर भी यह अकल्पनीय वेदना का संसार उन्होंने अपने हृदय में क्यों बसा लिया । उनके जैसा विनोदी परिहास प्रिय छायावादियों मे दूसरा नही मिलता किसी विनोद प्रिय अवसर के हल्के से स्पर्श से ही वो खुश हो जाती थीं । विराट युग की जीवन परिस्थितियों में से केवल वेदना को ही अपनी अन्त:संगिनी चुना । उसे अपने तन मन के अश्रुओं से नहलाकर अपने सम्पूर्ण उत्सर्ग से उसमें प्राण भरकर समस्त सहानुभूति की उसे व्यापकता प्रदान करके तथा अपने कवि हृदय के असंख्य स्वप्नों और अकलुष सौन्दर्य बोध से उसका श्रृङ्गार सजा करके उसको छायावादी काव्य के अनिन्ध कला बोध के ताजमहल के भीतर एक अदृश्य निराकार प्रीति प्रतिभा की तरह प्राण प्रतिष्ठित कर दिया । निश्चय ही यह व्यावहारिक यथार्थ के जगत के प्रति कर्तव्यनिष्ठ महादेवी का रूप नहीं है यह उनके सूक्ष्म अन्तर्जगत के चेतन उपचेतन, सूक्ष्म चेतन स्तरों में व्याप्त उस निरन्तर भारतीय नारी, उस आनेवाली विश्व-नारी का रूप है । उस अजेय राग-तत्व की अन्तरतप्त, स्वप्न, सौन्दर्य-भूषित विरह-दग्ध, तप: शुभ, सुक्ष्म-सुक्ष्मतम परमाणुओं से निर्मित विराट प्रतिभा का रूप है, ज विश्व की सृष्टि की प्राण पीठिका पर

अनादि काल से प्रतिष्ठित है । जहाँ प्रसाद के रूप में छायावाद ने भारतीय संस्कृति का अमृत घर इस युग को दिया, निराला ने समस्त देह-प्राण-मन तथा जागति को द्वन्द्वो से उपर की आत्म ज्योति का निराकार स्पर्श दिया, वहाँ महादेवी ने इस इस युग के लिए इन सबसे अधिक महत्वपूर्ण उस राग-मूल्य की प्रच्छन्न गूढ अन्तःसत्ता की ओर इंगित किया जिसके बिना आनेवाले युग का यथार्थ का अस्थिपंजर प्राण रस सौन्दर्य तथा मानव हृदय के प्रेम स्पन्दन से वंचित रहकर केवल एक दानव सा ही नवीन युग की पीठिका पर अट्टहास करता होता । सूक्ष्म भाव-प्रवण, महत राग सम्मोहनमयी महादेवी की इस वेदना के मूल भारतीय संस्कृति में गहरे अत्यन्त गहरे फैले हुए मिलते है । मध्ययुग की आह्लदिनी शक्ति अकथनीय, अगाध वेदना दर्शन मे बदल गई । मध्य युगों से भारतीय राग-भावना का विरह एवम् कुण्ठित साहित्यिक स्वरुप रहा है । इसी राग तत्व के मर्मस्पर्शी दंशी उद्वेलन एवम् जागरण की प्रतिनिधि गायिका, वेदना मूर्ति, कवयित्री महादेवी हैं जिन्होने विश्वमय प्राण-पुरुष की गोपन रहस्यमयी वंशी ध्वनि का आमन्त्रण स्वीकार किया । रस-सागर की उत्तान तरंगो मे डूबती उतराती अदृश्य-स्पर्श से रोमांचित होती हुई, भारतीय मध्य युगीन राग चेतना राधा भी विरह दग्ध, पीड़ा, वेदना, निष्कलुष दीपशिखा की तरह अहरह जलती हुई, प्रीति-साधना को पुनः अपने काव्य के चित्रकार में आभिव्यक्ति दी है । उन्नीसवी शताब्दी का स्वच्छन्दतावाद भी इसी से प्रेरित है । महादेवी वर्मा की काव्यात्यमक-वेदना हमे आत्मा परमात्मा मे न खोजकर वर्त्तमान अविकसित संकीर्ण मरणोन्मुखी सामाजिक यथार्थ के निर्मम-दंश तथा भावी आदर्श के स्पर्श में खोजना चाहिए । उन्हें मध्य युगो की पीठिका से हटाकर इसी युग की बाहरी-भीतरी बौद्धिक हार्दिक सामाजिक तथा सांस्कृतिक सशक्त मर्मस्पर्शी लोक प्रभावी की संशलिष्ट भूमिका पर खड़ा कर देखना चाहिए । महादेवी वर्मा कबीर या मीरा के पंक्ति से निकट है ।

अतः छायावाद के और विशेषतः महादेवी वर्मा की रहस्यमयी अभिव्यक्ति को मध्ययुगीन वैयक्तिक साधना की रहस्यवादी भूमि पर रखकर देखना अधिक युक्ति-युक्त है । मध्ययुगों मे पिछले युगो से अर्पित भारतीय चैतन्य का जीवन श्रोत सूख गया था । उसके स्थान पर शुष्क चिन्ह भी शेष रह गया था । अपनी समस्त करुणा, वेदना, संवेदना, आत्मविर्सजन अथवा मर मिटने की भावना को लेकर महादेवी की काव्य दृष्टि महान विश्व चेतना के स्पन्दित लोक मंगलमुखी तथा समाजोन्मुखी है । उसमे एक प्रच्छन्न आशा का सन्देश तथा नये जीवन प्रभात की अरुणिमा का भी सौन्दर्य है । महादेवी वर्मा ने प्रेम को

अर्न्तमुखी अभिव्यक्ति दी । वह पश्चिमी फ्राएडियन उपचेतन अवचेतन अन्धकार के गर्तो मे गिर नही सकता रागात्मक सत्य के नये मुल्य तथा नई सामाजिक मान्यता को अभाव के कारण लोटनिकस, हंग्री जनेरेसन्स तथा अन्यथा कवितावादी का अधोमुखी-विद्रोह आप देखने को मिलता है । सभी छायावादी कवियो ने अपने अपने ढंग से राग मूल्य के उन्नति सौन्दर्य को अपनी काव्य वस्तु में अभिव्यक्ति दी है ।

छायावाद की यह अमुल्य देन लोक मानस के लिए है । वह केवल रोमाण्टिक स्वच्छन्दतावादी प्रेममुक्ति का ही सन्देश वाहक नहीं रहा । उस मुक्ति को एक सामाजिक धरातल भी दिया है । महादेवी वर्मा के काव्य मे विश्व नारी के अतृप्त प्रेम अविकसित राग की विशुद्ध छायानुभूति है ।

अन्य कवि

क) रामधारी सिंह दिनकर

इस काल के स्वच्छन्दतावादी कवियों में रामधारी सिंह दिनकर का प्रमुख स्थान है । उन्होंने गीतों को प्रौढ़ता प्रदान की । वे अपनी भव्य कल्पना, उमंग और सामाजिक चेतना की तीव्रता के लिए प्रसिद्ध है । उन्होंने अपनी काव्य रचनाओं में राष्ट्रीय संघर्ष विप्लव, क्रान्ति, मानवतावाद, वैज्ञानिक युग का तर्क एवम् चिन्तन आदि को स्थान किया है ।

दिनकर राष्ट्रीय कवि हैं । उनका युग राष्ट्रीय संघर्ष और क्रान्ति का युग रहा है । राष्ट्रीय जीवन में उन्होंने स्वतन्त्रता संग्राम का युग तो देखा ही उसके बाद के युग को भी देखा । द्वितीय महायुद्ध की विभीषिकाओं से पीड़ित होकर वे मानवतावाद की ओर बढ़ें । इस पीड़ा में विज्ञान का क्या हाथ रहा, वह भी उन्होंने पहचाना है । कवि के रूप में दिनकर स्वप्न-लोक छोड़ कर मिट्टी पर आए और देश की दयनीय दशा को दृष्टि पथ में रखते हुए विप्लव का आह्वान किया जिसकी चिनगारी से देश का जड़भूत जीवन और अन्य विश्वास एवम् अन्य परम्पराएँ भस्मीभूत हो सकें । उन्होने देश भक्ति का गीत गाया, साम्प्रदायिकता का विरोध किया, दिनकर का युग सभी प्रकार की क्रान्तियों का युग था जिसने उन्हें कोमल भी बनाया और कठोर भी ।

रेणुका, रसवंती, कुरुक्षेत्र, रश्मिरथी, चक्रवाल उर्वशी आदि उनकी प्रमुख रचनाएँ है । दिनकर जी युग चारण कवि हैं, अतः उनकी रचनाओं मे जहाँ कहीं थोड़ी बहुत भक्ति भावना का आभास मिलता है वहीं वह मानव प्रेम सापेक्ष है । कवि ने जहाँ प्रेम का वर्णन किया है वहाँ स्वभावतः श्रृंगार रस माना जाएगा । कहीं-कहीं उनका श्रृंगार रस शान्त रस के क्षेत्र में पदार्पण करता हुआ दृष्टिगोचर होता है । **कुरुक्षेत्र** में वीर के साथ शान्त रस को प्रधानता मिली है । श्रृङ्गार का सर्वोत्तम उदाहरण **उर्वशी** है ।

दिनकर जी भक्त कवि तो नहीं है, किन्तु उनके काव्य में साधारण मानव-सापेक्ष अध्यात्म अवश्य मिलता है । ईश्वर में विश्वास होते हुए भी उन्हें कर्मबल में विश्वास है । स्वत्व की रक्षा के लिए उनकी दृष्टि में पाप पुण्य का प्रश्न कोई महत्व नही रखता । उनका जीवन दर्शन कर्ममय है और सत्य, समानता, मानवता और निष्ठा के आदर्शो से वह आपूरित है ।

स्वच्छदन्तावादी कवियों में अन्य अनेक कवियों के नाम भी उल्लेखनीय है । **माखनलाल चतुर्वेदी** भारतीय आत्मा एक प्रसिद्ध राष्ट्रीय कवि हैं । उनकी रचनाओं में निष्कपट, देश-प्रेम व्यक्त हुआ है । **हिम तरंगिनी** और **हिमाकिरीटिनी** उनकी दो प्रसिद्ध रचनाएँ है । **सियारामशरण गुप्त** की कविताओं में संवेदनशीलता और पर दुख कातरता की करुण धारा प्रवाहित है । अपने चिंतन और अनुभूति के कारण उनकी कविताएँ बहुत कुछ छायावादी कविताओं के निकट आ जाती है । आर्द्रा, दूर्वादल, विषद, मौर्य-विजय, अनाथ आदि इनकी प्रसिद्ध रचनाएँ है । **सुभद्राकुमारी चौहान** अज्ञात प्रियतम के विरह में आँसू न बहाकर देश की राह पर मिटने वाले की पवित्र स्मृति में आँसू बहाना अधिक पसन्द करती है । उसकी देश-भक्ति-पूर्ण कविताएँ प्रभावपूर्ण है । उन्होंने कुछ श्रृङ्गार रस की कविताएँ भी लिखी है जिनमें प्रेम की तड़प न होकर माधुर्य और संयम है । **झाँसी की रानी, ठुकरा दो या प्यार करो, प्रियतम से** आदि उनकी प्रसिद्ध कविताएँ है । **भगवती चरण वर्मा** कृति मधुकण, प्रेम संगीत, विस्मृति के फूल, मानव, रंगो से मोह आदि रचनाओं मे उनके हृदय की मस्ती का पूर्ण परिचय प्राप्त हो जाता है । हिन्दी कविता में **हरिवंश राय बच्चन** उमर ख्याम की मादकता और जीवनगत सौन्दय लेकर अवतीर्ण हुए थे । **मधुशाला**, **मधुकलश मधुबाला**, **एकान्त संगीत, निशा निमन्त्रण**, आदि उनकी प्रसिद्ध कृतियाँ है । इस काल के

कवियों में **शिवमंगल सिंह सुमन, आरसीप्रसाद सिंह, गोपाल सिंह नेपाली, अज्ञेय** आदि प्रसिद्ध कवि हुए ।

अध्याय तृतीय

३.१ रचना

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' का साहित्य बहुमुखी है । उन्होंने कविता, उपन्यास, कहानियाँ, निबन्ध, रेखाचित्र जीवनियाँ, आलोचनात्मक निबन्ध, अनुवाद तथा नाटक सभी कुछ लिखा है परन्तु इसमें अप्रकाशित भी है ।

निराला की रचनाओं पर दर्शन का प्रत्यक्ष और गम्भीर प्रभाव है । **'अधिवास', प्रचवटी-प्रसंग', तुम और मैं** आदि रचनाओं में कवि ने दार्शनिक सत्यको रुपायित करने का प्रयास किया है । **'परिमल' और 'गीतिका'** में प्रार्थना और बन्दना के गीत भी मिलते हैं, जो मध्यकालीन भक्ति-परम्परा से जोड़े जा सकते हैं । आध्यात्मिकता के प्रति निष्ठा होने के कारण कवि में कहीं-कहीं रहस्यवादी भावना के भी दर्शन होते हैं । यह आध्यात्मिकता सहज ही कवि की सांस्कृतिक चेतना से समन्वित हो जाती है । निराला में भी पुनर्जागरण के प्रभाव के फलस्वरुप प्राचीन भारतीय परम्परा के प्रति निष्ठा का भाव है और वे भी भारतीय संस्कृति के उन मूल्यों के सन्धान का प्रयास करते हैं जो वर्तमान जीवन को प्रेरणा दे सकें ।

वह सदैव नवीन की खोज करते रहे हैं और प्राचीन के प्रति विद्रोह करते हुए दिखाई देते हैं । इस लिए निराला जी के काव्य-साधना के विभिन्न पद हिन्दी-काव्य की प्रगति है ।

निराला को जीवन-भर आर्थिक संकट से संघर्ष करना पड़ा है । साथ ही वह एक भावुक एवं जागरुक कवि रहे । इस कारण इन्होंने बहुत कुछ साहित्य केवल पैसों के लिए लिखा । उनको जीवन-निर्वाह के लिए बहुत कुछ ऐसा भी लिखना पड़ा जो केवल प्रकाशकों ने लिखवाया और जिनके प्रति इनकी रुचि नहीं थी ।

अन्तः प्रेरणा से सृजित साहित्य के अन्तर्गत निराला जी के सभी कविता-संग्रह या कुछ रेखाचित्र आते हैं । निबन्ध भी इसी वर्ग के अन्तर्गत आते है । निबन्ध उनके विशाल अध्ययन, प्रखर प्रतिभा, सुक्ष्म कलात्मक अन्तर्दृष्टि एवं युग की सहज-सतर्क धारणा के परिचायक है ।

निराला अपनी धुन के पक्के और फक्कड़ स्वभाव के व्यक्ति थे । इसलिए उन्होंने सबकी उपेक्षा की । उनके काव्य में प्रारम्भ से ही विविधता के दर्शन होते हैं । यह विविधता भाषागत भी है और भावगत भी, विचारगत भी है और शिल्पगत भी । उदाहरणार्थ 'परिमल' में गीत भी है और मुक्त छन्द भी, मधुर भावों से अनुप्राणित प्रणयगीत भी हैं और ओजपूर्ण रचनाएँ भी । उसमें **'अधिवास'** और **'पंचवटी-प्रसंग'** जैसी दर्शनप्रधान रचनाएँ भी है और **'भिक्षुक'** तथा **'विधवा'** जैसी कविताएँ भी, जिनमें यथार्थ का तीव्र दंश दिखायी देता है । निराला की एक ही समय की रचनाओं में दिखायी देनेवाली यह अनेकरुपता सम्भवत : उनके अधययन के लिए सबसे अधिक महत्वपूर्ण संकेत है ।

निराला के आलोचनात्मक चिन्तन का एक अन्य महत्वपूर्ण सन्दर्भ वह है, जहाँ वे साहित्य की परम्परा से और अपने समकालीन लेखन की समस्याओं से टकराते हैं । चण्डीदास, विद्यापति, तुलसीदास, गालिब, रवीन्द्रनाथ के अनुभवों की दुनिया से अपना सम्बन्ध गहरा करने की प्रक्रिया में निराला कला के उपादानों या उपाकरणों का रचनात्मक विश्लेषण करते हैं ।

निराला जी द्वारा विरचित खण्ड काव्य, उपन्यास, कविता-संग्रह, कहानी-संग्रह, निबन्ध-संग्रह, रेखाचित्र आलोचनात्मक ग्रन्थ, जीवनियाँ, अनुवाद, नाटक एवं स्फुट-रचनाएँ कुल मिलाकर इस प्रकार है ।

१. कविता-संग्रह

क) अनामिका -भाग-१) १९२३, ख) अनामिका -भाग-२), सन् १९३८

ग) परिमल १९४०, घ) गीतिका १९३६

ङ) कुकुरमुत्ता १९४२ च) अणिमा, १९४३

छ) नये पत्ते १९४६ ज) बेला १९४६

झ) अपरा १९५० ञ) आराधना १९५३

ट) अर्चना १९५० ठ) श्री रामचरित मानस का खड़ी बोली में रूपान्तर

और

ड) 'वर्षगीत' अप्रकाशित है ।

२. कहानी-संग्रह

क) लिली

ख) सखी

ग) चतुरी चमार

घ) सुकुल की बीबी ।

३. खण्ड काव्य

क) तुलसीदास सन् १९३८

४. उपन्यास

क) अप्सरा ख) प्रभावती

ग) निरुपमा घ) अलका

ङ) श्रृंखला च) चोटी की पकड़

छ) चमेली

५. रेखाचित्र

क) कुल्ली भाट और बिल्लेसुर बकरिहा ।

६. आलोचनात्मक ग्रन्थ

क) रवीन्द्र-कविता कानन ।

७. निबन्ध-संग्रह

क) प्रबन्ध पद्म ख) प्रबन्ध-परिचय

ग) चाबुक घ) प्रबन्ध-प्रतिभा

८. अनुवाद

क) आनन्द मठ ख) कपाल कुण्डला

ग) चन्द्र शेखर घ) दुर्गेशनन्दिनी

ङ) कृष्णकान्त का बिल च) चुगलांगुलीथ

छ) रजनी ज) देवी चौधरानी

झ) राधारानी ञ) विषवृक्ष और

ट) राज सिंह तथा महाभारतका हिन्दी अनुवाद ।

९.जीवनियाँ

क) ध्रुव ख) भीष्म ग) राणा प्रताप

१०. नाटक

क) शकुन्तला ख) उषा अनिरुद्ध ग) समाज

११. स्फुट रचनाएँ

क) हिन्दी-बंगला शिक्षक　　ख) रस अलंकार

ग) वात्सयायन कामसूत्र　　घ) तुलसीकृत रामायण की टीका ।

इस प्रकार विभाजन किया है । और काव्यगत प्रवृत्तियो के आधार पर निराला के काव्य को चार वर्गों के अन्तर्गत विभाजित किया जा सकता है ।

क) रहस्यवादी कविताएँ ।

ख) छायावादी कविताएँ

ग) पंतिवादी कविताएँ । और

घ) प्रयोगवादी कविताएँ ।

क) रहस्यवादी

निराला के काव्य में रहस्यवाद की प्रवृत्ति पर्याप्त रुप में दृष्टिगोचर होती है । इनके प्रत्येक काव्य संग्रह में रहस्यवादी कविताओं की संख्या पर्याप्त है । रहस्य-भावना पर शंकराचार्य और विवेकानन्द का गंभीर प्रभाव पाया जाता है । सिद्धान्ततः निराला अद्धैवतवादी थे । **'तुम और मैं'** कविता इस वर्ग की कविताओं का प्रतिनिधित्व करती है ।

ख) छायावादी

हिन्दी में छायावाद लाने का श्रेय चार कवियों का है ।

जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा, सुमित्रानन्द पन्त और सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला । छायावाद के प्रमुख प्रवर्त्तक कवि निरालाजी हैं । प्रमुख विशेषताओं के अन्तर्गत अन्तर्जगत का चित्रण, वेदना का अतिरेक, प्रेम और श्रंगार का प्राचुर्य । नितान्त वैयक्तिकता, प्रकृति के प्रति नूतन दृष्टिकोण, रहस्यभावना, अभिनव अलंकार, नविन छन्द-विधान, प्रतीक विधान, लाक्षणिकता, विशेषण विपर्यय, गीतात्मकता तथा कोमलकान्त पदावली हैं ।

३. प्रगतिवादी

समाज के उपेक्षित मनुष्यों को विषय बनाकर जिन कवियों ने प्रगति के गीत गाए, उनमें से प्रमुख निरालाजी है । इसमें शोषित समाज के प्रति सहानुभूति एवं पुँजीपति वर्ग के प्रति आक्रोश एवं घृणा की अभिव्यक्ति की जाती है ।

निरालाजी अनामिका द्वितीय भाग के पश्चात् प्रगतिवाद की ओर उन्मुख हुए थे । 'भिक्षुक' और 'विधवा' इस वर्ग की प्रतिनिधि रचनाएँ हैं ।

४. प्रयोगवाद

कवि की कुछ रचनाओं में प्रयोगवाद के अंकुर दृष्टिगोचर होते हैं। निराला के काव्य में युग की अभिव्यक्ति पाई जाती है और उनका कवि सदैव युग-भावना को वाणी देता रहा है।

निरालाजी के काव्य-रचना-काल के अन्तर्गत आधुनिक हिन्दी साहिन्य के आधुनिक काल के तीन युग आते है।

छायावाद युग सन् १९२० से १९३५ तक

प्रगतिवाद युग सन् १९३६ से १९४४ तक तथा

प्रयोगवाद युग सन् १९४५ से १९६० तक। अतएव निराला की काव्य-रचना के युग की परिस्थितियों को समझने के लिए तीनों युगों की परिस्थितियों पर विचार करना आवश्यक हो जाता है।

३.२ भाषा

निराला में कीड़ावृत्ति है, अलंकरण वृत्ति है, इसमें सन्देह नहीं। जहाँ शब्दो में ध्वनि साम्य है, ध्वनि खण्ड को दोहराया गया है वहाँ भाषा की मांसपेशियों को टटोलते हुए वह उसके स्थूल सौंदर्य पर रीझते हैं। किन्तु इससे सुक्ष्म स्तर पर वह ऐसा ध्वनि संगठन करते हैं जो भावोत्कर्ष में सहायक होता है, जो उनकी रचना सामग्री का अभिन्न अंग है।

निराला-काव्य व्यंजन प्रधान है। स्वर की लहरों में व्यंजन तिनके की तरह बहते नजर नहीं आते बल्कि पंक्ति में अपना अस्तित्व स्थापित करते हैं। निराला की वक्तृत्व कला, उनका नाट्य कौशल उन्हें व्यंजनों पर के रीतिवादी कवियों की तरह पौरुषता उत्पन्न करने के लिए एक ही तरह की कठोर समझी जाने वाली ध्वनियों की झड़ी नहीं लगा देते हैं। निराला का रचना कौशल इस बात में है कि आस-पास के वर्णें के संसर्ग से वह ध्वनि विशेष का भाव मूल्य निरन्तर परिवर्तित करते रहते हैं।

निराला काव्य व्यंजन प्रधान है पर उसमें स्वरों का भी उतना ही महत्व है। स्वरों का ढांचा बहुत कुछ अदृश्य रहता है, उस अदृश्य ढांचे में व्यंजन मजबूती से जड़े होते है। इन स्वरों में जो दीर्घ है, वे ढांचे की सबसे मजबूत आधार है। पंक्तियों को यही स्वर साधे रहते हैं। अनेक लघु वर्णों के वाद दीर्घ स्वर वाला वर्ण रखकर छंद की गति में भंगिमा पैदा करता, दो तरह की पद-रचना में वैषम्य दिखाकर नाटकीय प्रभाव उन्पन्न करना निराला का प्रिय कौशल है। निराला ने तत्सम और तदभव शब्दों का जमकर प्रयोग किया है।

तत्सम शब्दों का प्रयोग अधिकाधिक ध्वनि और भाव के उदात्तीकरण के लिए किया गया है । जहाँ कोमल और मधुर भाव है, वहाँ भी प्रवृत्ति उदात्तीकरण की है । निराला का एक प्रिय शब्द 'मोगल' है । 'मुगल' को वह मोगल बनाकर उसकी ध्वनि को उदान्त कर देते हैं । शिवाजी के पत्र में इस मोगल रुप का प्रयोग अनेक बार हुआ है ।

मोगल दल विगलित बल
हो रहे हैं राजपूत
मोगल सिंहासनके
औरंग के पैरो के
नीचे तुम रक्खोगे,
काढ़ देना चाहते हो दक्षिण के प्राण
मोगलों को तुम जीवन दान ।

मोगल की ध्वनि के बल पर निराला ने उसे सर्वत्र तत्सम पदावली के समकक्ष रखा है । 'तुलसीदास' में उसका प्रयोग सबसे प्रभावशाली है ।

मोगल दल बल के जलद यान,
दर्पित पद उन्मद नद पठान ।

यहाँ मोगल पठान जेसे विरोधी स्वभाव के शब्दों को निराला ध्वनि की एक ही तरंग में बाँधे हुए ऊपर उठा लेते हैं ।

निराला की समास रचना अद्‌भुत है । एक-एक समास में वह पूरे वाक्य का काम लेते हैं । इसका सुन्दर उदाहरण 'रामकी शक्ति पूजा' में मिलता है । इसमें प्रत्येक समास अपने में पूर्ण वाक्य की तरह युद्ध का खंड-चित्र प्रस्तुत करता है ।

निराला को हिन्दी का शब्द 'मृदु' बहुत प्रिय है इसका प्रयोग उन्होंने खुलकर किया है मृदु छंद कंपन, मृदु उद्‌गार, मृदु मर्मर, मृदु मुखड़ा, मृदृ मन्द, मृदु मधुर आदि । अन्य छायावादी कवियों की तरह निराला-काव्य मे भी कवित्वपूर्ण शब्दावली यथा मसृण, सजल, चकित, मर्मर, मन्द, गन्ध, पल्लव, विमल, नवल, मुग्ध, लब्ध, गात, स्वप्न, अधर, नुपूर, ज्योत्स्नां, वेदना, कंपन, तरंग आदि का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में हुआ है ।

निराला-काव्य में मौलिक शब्दों का भी प्रयोग मिलता है जैसे, हेर, प्यारे -अन्य छायावादी कवियों ने प्यारे की जगह प्रिय को अधिक स्थान दिया है), मग -मार्ग), मेह ठौर (ठेठ शब्द) आदि । निराला ने अपनी कविता मे उेसे बहुत से शब्दों का प्रयोग किया है जो

उनकी कविता से अलग कर के देखे जाय तो अनुपयोगी लगेगें, छायावादी कवियों का ध्यान उनकी तरफ कम गया है, किन्तु निराला ने साहस और चतुराई से उनका कलात्मक प्रयोग किया है ।

परन्तु कभी-कभी निराला-काव्य काफी कठिन हो जाता है कारण सिर्फ तत्सम् शब्दों का प्रयोग ही नहीं है बल्कि सामान्य शब्दो का असाधारण प्रयोग भी है । निराला स्वभावत विद्रोही थे । उन्होंने जीवन साहित्य एवं समाज की भांति कला के क्षेत्र में भी रुढ़ियों एवं परम्पराओं को स्वीकार नहीं किया । निराला ने भाषा, छन्द, शैली प्रत्येक क्षेत्र में मौलिकता, नवीनता को समाविष्ट करने का प्रयत्न किया । भाव-पक्ष और कलापक्ष दोनो ही क्षेत्रों मे महत्वपूर्ण योगदान किया है । छायावादी कवियों ने भावपक्ष के क्षेत्र में अनेक नवीन विषयों का समावेश किया है । कलापक्ष के क्षेत्र में उन्होंने नवीन भाषा शक्ति, मौलिक छन्द-विधान एवं नवीन अलंकार शैली को जन्म दिया । निराला की भाषा शैली छायावाद के समस्त गुणों से युक्त है, छायावादी कविता की भाषा की प्रमुख विशेषताएँ कोमलता शब्दो की मधुर योजना, भाषा का लाक्षणिक प्रयोग, संगीतात्मकता, चित्रात्मकता प्रकृतिगत प्रतीको की प्रचुरता तथा रुढ़ियो का विरोध है । निराला की भाषा में ये समस्त विशेषताएँ पाई जाती है ।

१.कोमलता

भाषा को कोमलता प्रदान करने के लिए निराला ने अंग्रेजी और बंगला की कविता पद्धति को अपनाया है । स्वर्णमय, स्वप्निल, कनक प्रभात, मुस्कान, छल-छल, कल-कल, छलना, कुहुकिनी आदि शब्दों का प्रयोग द्वारा निराला ने अपनी भाषा को कोमलता प्रदान की है -

"कहाँ कनक कोरों के नीरव
अश्रुकणों में भर मुस्कान" तथा
"आयी याद चाँदनी की धुली हुई आधी रात
आयी याद कान्ता की कम्पित कमनीय गात ।"

२. शब्दों की मधुर योजना

निराला ने अन्य छायावादी कवियो की भाँति भाषा को भावानुसारिणी बनाने के लिए शब्दों की मधुर योजना की है

जागो जीवन धनिके, विश्व पण्य-प्रिय वणिकें

खोलो उषा-पटल निज कर आयि छविमय दिन मणिके ।

आरम्भ से ही उनमें यह प्रवृत्ति रही है कि जो शब्द परिष्कृत हिन्दी के लिए निषिद्ध है उनका व्यवहार भी करे । इनमें बहुत से शब्द उर्दू के हैं जिन्हे लोग बोलते तो हैं किन्तु लिखते कम है, विशेष रुप से कविता में जैसे -

तब से यह नौबत आई है

दगा दिया तूने ज्यों । आदि

भाषा का लाक्षणिक प्रयोग - निराला की भाषा में लाक्षणिक प्रयोग भरे पड़े हैं

"नभ कर गई पार पाखें-परी नागरी की

तिल नीलिमा को रहे स्नेह से भर ।"

यहाँ नभ, पाँखें, तिल, नीलिमा आदि द्वारा लाक्षणिक प्रयोग किए गए हैं ।

४. संगीतात्मकता

छायावादी कवियों की भांति निराला ने भी तुक के संगीत को बहिष्कृत कर दिया और उसके स्थान पर लय संगीत को अपनाया । निराला की कविता लय- संगीतमय भाषा का अप्रतिम उदाहरण है ।

दिवावसान का समय, मेघमय आसमान से उत्तर रही है ।

वह सन्ध्या-सुन्दरी परी सी धीरे-धीरे-धीरे ।

५.चित्रात्मकता

निराला शब्दो के बल पर भाव- चित्र प्रस्तुत कर देते हैं । उपयुक्त उद्धरण में सन्ध्या सुन्दरी का सुन्दर भाव-चित्र है । एक और उदाहरण द्रष्टव्य है ।

दूर नदी पर नौका सुन्दर

दिखी मृदुतर बहती ज्यों स्वर ।

६. प्रकृतिगत प्रतीको की प्रचूरता

छायावादी कवियों ने प्रकृति का प्रयोग भाव और कला दोनो ही क्षेत्रों में पूर्ण कुशलता के साथ किया है । निराला ने प्रकृतिगत प्रतीको के द्वारा अपनी अभिव्यंजना को शक्ति एवं प्रभावोत्पादकता प्रदान की है ।

'वहाँ नयनों में केवल प्रात, चन्द्र ज्योत्स्ना ही केवल गात

रेणु छाये ही रहते पात, मद ही बहती सदा बयार ।'

यहाँ प्रात : चन्द्र, ज्योत्स्ना, रेणु क्रमश : स्फूर्ति, शान्ति और शीतलता के प्रतीक हैं ।

७. रुढ़ियो के प्रति विद्रोह

छायावादी कवियों की भांति निराला ने भाषा को केवल भावाभिव्यक्ति का साधन माना है, इसलिए उन्होंने भावों की सहज अभिव्यक्ति के लिए व्याकरण के नियमों एवं छन्द के बन्धनों की उपेक्षा और नवीन शैली, द्धारा भावाभिव्यक्ति की छन्द एवं अलंकार के क्षेत्र में यह प्रवृत्ति अधिक रूप से दिखाई पड़ती है ।

निराला की भाषा शुद्ध साहित्यिक खड़ी बोली है, इसमें तत्सम शब्दों की बहुलता है । निराला की भाषा कहीं कहीं इतनी सरल है कि पाठक इसे सहजता से समझ लेते हैं । निराला की अनेक कविताओं में अत्यन्त उच्च कोटि का शब्द विन्यास मिलता है । साथ ही रूप विद्यायिनी शब्द कला के स्थान पर थोड़े में बहुत कहने का प्रयत्न अधिक है । निराला ने अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए जिस छन्द को चुना उसे मुक्त छन्द कहते हैं । निराला ने मुक्त छन्द का निर्भय होकर प्रयोग किया है । हिन्दी साहित्य को उनका यह मौलिक देन है ।

निराला की शब्द योजना भावानुसारिणी है । यदि प्रसाद गुण की अभिव्यक्ति के लिए इन्होनें कोमल एवं सरल शब्दावली का प्रयोग किया है तो ओजगुण को व्यक्त करने के लिए शक्तिशाली और समासयुक्त शब्दावली प्रयुक्त की है । समग्र रुप मे इनकी भाषा-शैली मौलिक एवं भावाभिव्यंजना में सर्वथा सफल है ।

३.३ काव्य शिल्प

निराला सैद्धान्तिक दृष्टि से वेदांत मत के अनुयायी थे और उन पर स्वामी विवेकानंद के विचारों, वैष्णव कवियों और बंग भाषा की गीति पद्धति का प्रभाव था । ज्ञान और वेदांत सम्बन्धी विषयों का उन्होंने गहन अध्ययन किया था । किन्तु व्यवहारिक दृष्टि से वे कट्टर वेदांती नहीं थे । वैषम्य का कारण उनका कवित्व है । अद्धैत और काव्य की रागात्मक विभूति का सामंजस्य स्थापित नहीं हो सकता । और यही कारण है कि उनके काव्य में सैद्धान्तिक शुष्कता मिलती है । फलत : उनके गीतों की अनुभूति का क्षेत्र सीमित हो गया । उनके गीतों में दार्शनिकता और ज्ञान तत्व अधिक पाए जाते हैं जिसके कारण कविताओं में दुर्बोधता और कठिनता आ गई ।

वक्तृत्व कला का निराला काव्य में पूरा विकास हुआ है । **'पंचवटी प्रसंग', जागो फिर एक बार, बादल राग** आदि में इनकी वक्तृत्व कला निखर कर सामने आई है । कहीं-कहीं रामकृष्ण परमहंस के वेदांत तो कहीं तुलसीदास की भक्ति के बोझ से यह कला दबती जरुर है पर जब पंचवटी प्रसंग के तीसरे अंश में जहाँ शूर्पणखा आती है, वक्तृत्व कला का वैभव सहसा प्रकट हो जाता है ।

'**जागो फिर एक बार**' (२) में प्रवाह अधिक संचय नाटकीयता का रंग और गहरा है । सेना है, युद्ध है, पराजय है, पराजय स्वीकार करने वालों की भर्त्सना है । वेदान्त है किन्तु नाटकीयता पर हावी होने के बदले वह उस पर आश्रित है । पूरी कविता किसी एक व्यक्ति का भाषण है ।

पशु नहीं, वीर तुम

समर शूर, क्रुर नहीं

काल चक्र में हो दबे

आज तुम राजकुँवर "समर सरताज "

जागो फिर एक बार वक्तृत्व कला का एक सुन्दर उदाहरण हो ।

३.४ यथार्थ चित्रण

निराला साहित्य में यथार्थ चित्रण पर आवश्यक बल दिया गया है । निराला ने यथार्थ के अनुभव को व्यंग्यात्मक परिणति देकर उसका चित्रण किया है । यथार्थ चित्रण के प्रति उनकी सजगता काव्यसृजन के आरसम्भिक दौर से ही देखी जा सकती है । यथार्थ के विद्रुप अथवा व्यंग्य की और उनका झुकाव **'कुकुरमुत्ता', बेला, नये पत्ते** आदि में स्पष्ट रुप से दखिाई पड्ता है । **तोड़ती पत्थर,** और **ठूंठ** जैसी रचनाएँ यथार्थ चित्रण की दृष्टि से उल्लेखनीय है । इनमें चित्रण की यथातथ्यता, वस्तुपरकता ठोसपन का अपना अर्थ है । दृश्य अथवा अनुभव के प्रति एक तटस्थ प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए भी निराला अपना संवेदनात्मक लगाव खो नहीं देते । **'तोड़ती पत्थर'** कविता यथार्थवादी कविता का कलात्मक प्रतिमान बनाने वाली कविताओं में अत्यन्त महत्वपूर्ण है । इसकी स्पष्टता और अर्थ

सघनता के बारे में निराला कितने सचेत रहे हैं, इसका अनुमान हम उनकी कविताओं के अध्ययन से सहज लगा सकते हैं -

कोई न छायादार
पेड़ वह, जिसके तले बैठी हुई, स्वीकार,
श्याम तम, भर बँधा यौवन,
नत नयन, प्रिय कर्मरत मन,
गुरु हथौड़ा हाथ, करती बार-बार प्रहार सामने तरुमालिका अट्टालिका, प्रकार ।

'ठूँठ' कविता की सादगी प्रकृति के एक यथार्थ अनुभव को तीखे पर शान्त प्रभाव के रूप में प्रस्तुत करती है

ठूँठ यह हैं आज !
गयी इसकी कला,
गया है सकल साज ।
अब यह बसन्त से होता नहीं अधीर,
पल्लवित, झुकता नहीं अब यह धनुष-सा,
कुसुम से काम के चलने नहीं हैं देती,
छाँह में बैठने नहीं पथिक आह भर
झरते नहीं यहाँ दो प्रणयियों के नयन नीर ।
केवल वृद्ध विहग एक बैठता कुछ कर याद ।

जहाँ व्यंग्य का स्वर प्रधान हो गया है वहाँ संवेदनात्मक लगाव के पीछे छूट जाने का खतरा है । यह भी खतरा है कि व्यंग्य देने लगे । निराला की पक्षधरता इस खतरनाक अराजकता को नियंत्रित करती है । छायावादी कविता के लाक्षणिक सौन्दर्यधर्मी प्रगीतात्मक अभिव्यक्ति वाले दौर में भी निराला यथार्थ दर्शन का अर्थ और प्रयोजन जान रहे थे । काव्यगत नवीनता के वे पहले आविष्कारक हैं- खड़ी बोली आधुनिक कविता के ढाँचे के भीतर । इस नवीनता के पीछे यथार्थ का ही बल है ।

निराला की कविता **'रानी और कानी'** में कुरुपता के यथार्थ की व्यंग्यात्मक त्रासदी पैदा करती है-

और की जात रानी
ब्याह भला कैसे हो
कानी जो है वह ।

अणिमा, बेला और **नए पत्ते** में यथार्थ चित्रण का ऐसा उदाहरण मिलता है जो दृश्य तथ्य का उल्लेख भर है । साथ ही यथार्थ स्थिति का ऐसा सचेत राजनीतिक उपयोग भी, जिसकी व्यंजना एक पूरे सामाजिक संदर्भ को उजागर करती हो । **'झींगुर डट कर बोला'** जैसी कविता में राजनीतिक अर्थ मे वर्ग संघर्ष की चेतना का उभार दिखाई देता है-

चूँकि हम किसान सभा के
भाई जी के मददगार
जमींदार ने गोली चलवाई
पुलिस के हुक्म की तामीली की
ऐसा यह पेंच है ।

निराला की कविता का यथार्थवाद एक पूरे समय के सामाजिक संघर्ष को, जन संघर्ष को, अधिकारों के लिए लड़ रही जनता के संघर्ष को प्रत्यक्ष करता है । यथार्थ के इस व्यापक चित्रण में निराला सफल हैं । निराला ने अपने मूल परिवेश की सामाजिक समस्याओं की अवगति के आधार पर ही इस वृहत्तर यथार्थ चेतना को ग्रहण किया है । पंत के काव्य संसार में ऐसा परिवर्तन एकदम आकस्मिक होता है और फिर वह दृश्य से गायब भी हो जाता है । निराला-काव्य में ऐतिहासिक परिस्थितियों की समझ के साथ सम्भव हुआ है और किसी न किसी रूप में दृश्य पर बराबर अंकित है । प्रेम और प्रार्थना की कविताएँ भी सामाजिक वास्तविकता के एक तीखा द्वन्द्वात्मक सम्बन्ध बना ली है । इसलिए निराला के काव्य-संसार मे यथार्थ के अनुभव और चित्रण के आयाम विविध और जटिल है ।

कुछ तो उनके निजी जीवन की पीड़ा ने और कुछ उनकी प्रखर-मुक्त प्रतिभा ने उन्हें यथार्थ के विषम एवं निम्नतर पक्षेां की ओर भी आकृष्ट किया। यह आकर्षण कहीं तो करुणा के रूप में व्यक्त हुआ है और कहीं व्यंग्य और उपहास के रूप में।

अध्याय चतुर्थ

भावबोध

४.१ स्वाधीनता प्रेम

कवि निराला का अभ्युदयकाल प्रथम महायुद्ध की समाप्ति के बाद राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन के उभार का समय है । सन् २० से सन् ४७ तक स्वाधीनता-प्राप्ति की आकांक्षा उनके साहित्य की मौलिक प्रेरणा है । हिन्दी में उनकी पहली प्रकाशित कविता जन्मभूमि पर है । दूसरे महायुद्ध के दौरान ' **चोरी की पकड़'** उपन्यास की भूमिका में उन्होंने लिखा । दूसरे महायुद्ध के बाद राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन के नये क्रान्तिकारी उभार के दिनों में इलाहाबाद के विद्यार्थियों ने वीरता से जब साम्राज्यवादी दमन का मुकावला किया । भारत स्वाधीन हुआ किन्तु जिस स्वाधीन भारत का स्वप्न निराला देख रहे थे, वह साकार न हुआ । साहित्य में अवसरवादीता, चाटुकारिता की बाढ-सी आ गई, उच्चवर्ग समृद्ध हुए, निम्नवर्ग को दैन्य से मुक्ति न मिली :

मंदिर में बंदी हैं चारण,
चिधर रहे हैं वन में वारण,
रोता है बालक निष्कारण,
बिना-सरण सारण भरणी है । (अर्चना पृ.५१)

साहित्यिक जीवन के आरंभ से लेकर आखिरी दौर तक साहित्य के विभिन्न रूपों में और उनके विभिन्न स्तरों पर देश को सुखी, स्वाधीन और समृद्ध देखने की आकांक्षा उन्हें प्रेरित करती है ।

भावबोध और कला की दृष्टि से निराला-साहित्य के अनेक स्तर हैं । इनमें एक स्तर विशुद्ध प्रचारक है जहाँ उनकी निगाह हिन्दी के उन पाठकों पर है जो बहुत कम पढे-लिखे हैं किन्तु जिनकी राजनीतिक चेतना को निखारना वह अपना कर्तव्य समझते हैं । **'मतवाला'** (२६ अगस्त १९२३) में 'निराला' नाम के साथ जो पहली कविता छपी है, वह इसी प्रचारात्मक स्तर पर लिखी है और यह **'मतवाला'** का पहला अंक भी है ।

उस समय जिस तरह की भाषा और शैली में राजनीतिक कविताएँ लिखी जाती थीं, राखी पर निराला की रचना उन्हीं के अनुरूप है । त्योहारों, पौराणिक वीरों के बहाने राष्ट्रीय आत्म-सम्मान का भाव जगाने और अंग्रेजों का विरोध करने की प्रवृत्ति भी उस समय की कविताओं में देखी जाती है । यही प्रवृत्ति राखी पर, **'मतवाला'** के दूसरे अंक में **'कृष्ण-महात्म'** पर कविताओं में है । यह ब्रजभाषा में है, कवि का नाम छपा है- 'पुराने महारथी' । कृष्ण काले, राधा और अन्य गोपियाँ गोरी, दोनों में प्रेम, लेकिन अब ?

पै अब ऐसो हाल कि 'काले' हाथ पसारे ।
धेला भर भी प्रेम लेत 'गोरन' सों हारे ।

'मतवाला' के तीसरे अंक में पुराने ढंग की सानुप्रास शब्दावली का सहारा लेते हुए निराला चेतावनी देते हैं । यह कविता भी 'निराला' नाम के साथ छपी है । स्पष्ट है कि यह छद्मनाम मूलत : रहस्यवादी अथवा छायावादी कविता रचने वाले के लिए प्रयुक्त न हुआ था । निराला के प्रचारमूलक काव्य की यह शैली बराबर निखरती गई ; जवाहरलाल नेहरु के जेल से छुटकारा न मिलने पर, विजयलक्ष्मी पण्डित के पतिदेव के निधन पर उनकी कविताओं में इस शैली का स्वच्छ कलात्मक रूप मिलेगा ।

देशवासियों को पराधीन देखकर निराला के मन में अनेक भाव उदय होते हैं, कभी वह आत्मग्लानि से पीड़ित होते हैं, कभी मन अवसादग्रस्त हो जाता है, कभी अतीत का स्मरण करके जनता में राष्ट्रीय आत्मसम्मान का भाव जगाते हैं, पराधीनता से समझौता करने वालों पर क्रुद्ध होते हैं । उन्होंने **'मतवाला'** के दो अंकों (२३, ३० अगस्त, २४) में एक कविता लिखी थी- **'स्वाधीनता पर**' । (**गीतिका**, पृ.२०) पुरानी इमारतों के खण्डहर देखकर उन्हें भारत का गौरवमय अतीत याद आता है । वे खंडहर वर्तमान भारत से कहते हैं- ऋषि-महर्षि, राम, कृष्ण, भीष्म और अर्जुन जैसे वीर, यहीं खेले और बड़े हुए थे । **अनामिका,** (पृ. ३०) मुगलों के शासनकाल में भारत ने नये वैभव के चित्र देखे किन्तु वह वैभव भी खत्म हो गया ; आज भी चार स्तम्भ हैं, मकबरे मौन हैं । शिवाजी, गुरु गोविन्द सिंह जैसे वीरों ने स्वाधीनता के लिए युद्ध किया किन्तु उनकी विरासत को लोग भूल गए हैं । निराला-काव्य (**परिमल,** पृ. १७५) में अनेक भावों का श्रोत है, देश-प्रेम है ।

भारतीय चिन्तन-पद्धति में तीन योग प्रसिद्ध हैं ज्ञान, भक्ति और कर्म । विद्धानों के अनुसार इनमें किसी एक के सहारे मनुष्य को ईश्वर-प्राप्ति हो सकती है । निराला के लिए पूर्ण ज्ञान का अधिष्ठान, हृदय की सम्पूर्ण श्रद्धा और भक्ति का आधार, जीवन के समस्त कर्मों का लक्ष्य भारत । निराला की एक प्रिय कल्पना थी, भारत अपने शब्दार्थ मे ही ज्ञानमय है । भा अर्थात् प्रकाश, भारत अर्थात् प्रकाशवान् । "संस्कृत में 'भारत' भरत से सम्बद्ध है- भा :+ रत -भासि रत :), जो ज्ञान में रमा हुआ है ।" निराला व्याकरण की चिन्ता न करके 'भारत' में नयें अर्थ-विचार से, निराकार वेदान्त-ज्ञान को साकार देखते हैं । 'तुलसीदास' में इसी ज्ञानमय भारत का सूर्यास्त होता है, तुलसीदास की काव्य-साधना इसी भारत का अपार भ्रम हरने के लिए हैं । शिवाजी का संघर्ष ज्ञानमय भारत की प्रतिष्ठा के लिए है । गुरु गोविन्द सिंह ने इसी भारत की साधना करके मरणलोक से उस पार मन को पहुँचा दिया था । बींसवीं सदी में भारतवासी जब अपना ज्ञानरुप भूल गए तब उनके उद्धार के लिए रामकृष्ण परमहंस का अवतार हुआ ।

शास्त्रों का मूल है भारत । वह सनातन है । वेदान्त-ज्ञान का अधिष्ठान है । निश्चित है कि वेदान्त का सम्बन्ध युनान से होता तो निराला के लिए वह उतना महत्वपूर्ण न होता । वेदान्त उसके लिए विश्व का सर्वश्रेष्ठ ज्ञान है क्योंकि वह भारतीय है । जो ज्ञान असीम है, वह प्रत्यक्ष होता है । सन् ४२ में उन्होंने गीत लिखा था :

भारत ही जीवन धन,
ज्योतिर्मय परम-रमण,
सर-सरिता वन उपवन ।

अणिमा, पृ. ६७

निराकार ज्ञान का अधिष्ठान, ज्योतिर्मय परम-रमण है । कौन किसका प्रेरक है-वेदान्त देशप्रेम का या देशप्रेम वेदान्त का ? निराला ने ज्ञान को भारत से, निर्गुण को सगुण से जिस तरह बांधा है, उससे सिद्ध है कि मूल प्रेरणा देशभक्ति की है, निराला के मन में वेदान्त का रुप उसी ने स्थिर किया है ।

धार्मिक आस्था, उनकी भक्ति का आधार है । उनकी रचनाओं में देवी, सरस्वती, काली, महावीर आदि देवताओं की प्रतिष्ठा है । शिक्षा, संस्कार परिवेश-अनेक कारणों से

उनके मन में भक्ति भाव का उदय होना स्वाभाविक है । देवी-पूजा अवध में भी होती है, बंगाल मे विशेषत:, परम वेदान्ती रामकृष्ण परमहंस और उनके शिष्य स्वामी विवेकानन्द में दुर्गा या काली के प्रति यह भक्तिभाव अनेक स्थलों पर झलकता है । निराला की कविता में जब राम परास्त होते हैं, स्वयं को धिक्कारते हैं, सीता का उद्धार, विभीषण का राजतिलक असम्भव सा प्रतीत होता है, तब वह विजय-प्राप्ति के लिए दुर्गा की ही पूजा करते है । किन्तु निराला की दुर्गा कृतिवास की पारम्परिक दुर्गा नहीं है । जाम्ववान की सलाह है- **शक्ति की करो मौलिक कल्पना** । यह मौलिक कल्पना रावण के पास नहीं है, राम अपनी मौलिक कल्पना से उनकी पारंपरिक साधना को व्यर्थ कर देंगे । कल्पना की मौलिकता किस बात में है ? जो सामने प्रत्यक्ष भूधर है, पार्वती उसी की 'कल्पना' है । यथार्थ है भारत का एक पर्वत, कल्पना हैं पार्वती । दसों दिशाएं उनके हाथ है, आकाश रुप में शिव उनके मस्तक पर हैं, गरजता हुआ सिन्धु ही सिंह है और जिस असुर को दुर्गा ने मारा है, वह मानव के मन में है । शक्ति की कल्पना में मौलिकता यह है ।

अन्य कविता में इस कल्पना की आवृत्ति है । स्वामी विवेकानन्द कैलाश की यात्रा करते हैं । हिमालय का दिव्य सौन्दर्य देखकर लगता है किसी को भी असुर बना दो, क्या फर्क पड़ता है ? मानव का मन असुर हो चाहे हिमालय का कोई ताल, मुख्य बात यह कि भारत के किसी पर्वत को ही देखकर पार्वती की कल्पना की गई है । एक कविता में वह पर्वत दक्षिण भारत का है, दूसरी में उत्तर भारत का । रावण और दुर्गा से राम त्रस्त हुए हैं, महावीर नहीं । सिंह के समान गरजने वाले सिन्धु को मथते हुए वह सघन अंधकार उगलने वाले आकाश को अपने अट्टहास से कंपा देते हैं । शिव बहुत स्पष्ट शब्दों में दुर्गा को सावधान करते हैं । स्वयं राम जिस शक्ति को पूजते है, वह महावीर को परास्त नहीं कर सकती । यह अपराजेय योद्धा भी निराला की कल्पना में भारत रूप है ।

'**भक्त और भगवान**' कहानी में भक्त को स्वप्न में महावीर दिखाई देते है । उनका मन ऊपर आकाश में है, नीचे समस्त भारत 'पर यह भारत न था- साक्षात् महावीर थे, पंजाब की ओर मुँह, दाहिने हाथ में गढ़ा-मौन शब्द-शास्त्र, बंगाल के दाएँ-बाएँ पर हिमालय पर्वत् की श्रेणी, बगल के नीचे बंगसागर, एक घटना वीरवेश सूचक-टूटकर गुजरात की ओर बढ़ा हुआ एक पैर प्रलम्ब-अंगूठा कुमारी अन्तरीप, नीचे राक्षस रूप लंका-कमल-समुद्र पर खिला हुआ ।'

यह महावीर की 'मौलिक कल्पना' हुई, इसका भी आधार है भारत ।
महावीर किसी के सामने श्रद्धा-विनत हैं तो अपनी माता अंजना के सामने ।

'**राम की शक्तिपूजा**' में वही उन्हें समझा-बुझाकर आकाश से धरती पर उतारती हैं । **'भक्त भगवान्'** कहानी में महावीर भक्त को अपनी माता के दर्शन कराते हैं **"वत्स, यह मेरी माता देवी अंजना हैं** ।" भक्त देखता है कि महावीर का चिन्ह- सिंदूर-सिर पर धारण किए उसकी स्वर्गीया पत्नी खड़ी है । पत्नी का नाम है- सरस्वती । परम शक्तिशाली महावीर श्रद्धा-विनत है अंजना अथवा सरस्वती के सामने । और यह सरस्वती भारत रूपा है । -गीतिका, पृ. ७१) भारत-रूपा होने से वह कनक-शस्य धरा हैं । उनके चरणों के नीचे शतदल के समान लंका है, सिर पर हिमतुषार का शुभ्र मुकुट है, गले में गंगा का ज्योतिर्मय हार है । भारतभूमि ही निराला की भारती हैं ।

'नये पत्ते' संग्रह की रचना में भारती का सबसे भव्य और विराट् चित्र **'देवी सरस्वती'** कविता में है । भारत का देशगत और कालगत रुप, वैदिक और लौकिक संस्कृत का वाङ्मय, सूर, तुलसी, कबीर, मीरा का काव्य, भारतीय भाषाओं में 'प्रान्तीय सभ्यता का आलेखन', डफ और मंजीरो के साथ गाए हुए किसानों के लोकगीत-सब कुछ इन सरस्वती में हैं । भारत की प्रत्यक्ष धरती-वही सरस्वती है । तुलसीदास के लिए गिरा अनयन थी : निराला के लिए वह सनयन हैं । भारतरूपा सरस्वती दूसरों को देखती हैं, स्वयं भी दिखाई देती हैं । सरस्वती की इस मौलिक कल्पना का आधार है भारत । यह हुआ निराला का भक्ति योग ।

निराला के समस्त कर्मफल, उनकी समस्त साधना मातृभूमि को अर्पित हैं ।

नर जीवन के स्वर्थ सकल
बलि हों तेरे चरणों पर, माँ
मेरे श्रम-संचित सब फल । -गीतिका, पृ. २०)

इस मातृ-मूर्ति का ध्यान करते हुए वह मृत्यु-पथ पर बढ़ने का प्रण करते हैं देश को मुक्त करने के लिए प्राण भी न्योछावर है । भक्तियोग और कर्मयोग यहाँ मिल गए हैं । जिस देवी

के लिए वह अपना शरीर तक देने को उद्यत हैं, वह दुर्गा, महावीर, सरस्वती न होकर साक्षात् भारतमाता है । निराला के श्रम-संचित फल इन्हीं के चरणों पर अर्पित हैं ।

कर्म अनेक प्रकार के हैं, इनमें सैनिक कर्म और कवि-कर्म मुख्य हैं । शिवाजी और गुरु गोविन्द सिंह के सैनिक कर्म भारत की मुक्ति के लिए, उसके ज्ञानमय रूप की प्रतिष्ठा के लिए हैं । तुलसीदास कवि हैं, उनके कवि-कर्म का उद्देश्य भी वही है ।

निराला में ज्ञान, भक्ति और कर्म-तीनों योगों के समन्वय का आधार है, उनका देश प्रेम ।

निराला का देशप्रेम और महात्मा गांधी के देशप्रेम में भिन्नता है । गांधी भी सत्य और अहिंसा का प्रयोग कर रहे थे, उनमें एक प्रयोग भारत को स्वाधीन करना था । निराला की आस्था का आधार, उनके समस्त कर्मों का लक्ष्य है भारत । गांधीवादी आन्दोलन द्वारा प्रभावित राष्ट्रीय कविता के रचयिता हैं मैथिलीशरण गुप्त । यह कविता मनुष्य के गूढ़ भाव-स्रोतों को नहीं छूती । निराला की कविता एक ओर प्रचारात्मक है, और उसका यह रूप निखरता हुआ कलात्मक बनता जाता हैं, दूसरी ओर उनकी कविता में आस्था का गहरा स्पर्श, परोक्ष को प्रत्यक्षवत् देखने की शक्ति, द्रष्टा की सी तन्मयता का भाव है जो हिन्दी कविता में अन्यत्र दुर्लभ है । **नरजीवन के स्वार्थ सकल**- इस गीत में कवि और उसकी इष्टदेवी में दृष्टि का विलक्षण आदान-प्रदान है । एक ओर वह चाहते हैं कि उनके हृदय में मातृभूमि की अश्रुजल मूर्ति जागे और वह उसे मन भर देखते रहें दूसरी ओर वह चाहते हैं कि भारत माता भी उन्हें अपनी सकल दृष्टि से देखें । रहस्यवादी रचनाओं में तो ऐसी तन्मयता और भाव-विह्वलता के दर्शन होतें हैं किंतु देशप्रेम पर लिखी हुई कविताओं में भाषण अधिक मार्मिकता एक-दूसरे से अलग नहीं है, इसीलिए उनमें द्रष्टा का आलोक और भक्त की विह्वलता है ।

स्वाधीनता आन्दोलन और निराला की राजनीतिक चेतना में यह अन्तर भी है कि निराला के लिए स्वाधीनता आन्दोलन अभिन्न रूप से सामाजिक क्रान्ति से जुड़ा हुआ है । देश के नाम पर वह देश की जनता को भूलते नहीं, जनता के सुखी समृद्ध जीवन के लिए, देश को स्वाधीन होना है । इसी कारण स्वाधीनता आन्दोलन और सामाजिक क्रान्ति परस्पर सम्बद्ध हैं ।

४.२ क्रान्ति की आकांक्षा

निराला क्रान्ति के कवि है, क्रान्तिकारी परिवर्तन की यह आकांक्षा २९ डिसम्बर सन् २३ के 'म**तवाला**' में प्रकाशित उनकी कविता **'धारा'** से लेकर **सांध्यकाकली** में प्रकाशित अन्तिम दौर की शिवताण्डववाली कविता तक अनेक रुपों में, भाव-बोध के अनेक स्तरों पर व्यक्त हुई है । निराला जी उस क्रान्ति के जिसका लक्ष्य भारत को विदेशी पराधीनता से मुक्त करना ही नहीं, जनता के सामाजिक जीवन में मौलिक परिवर्तन करना भी है ।

निराला ने क्रान्ति के चित्रण के लिए अनेक प्रतीकों का उपयोग किया है । कहीं धारा, कहीं बादल, कहीं शिव और काली, कहीं पुराने पत्तों का सूखना और नये पत्तों का आना । क्रान्ति का जो रूप सबसे पहले पहचान में आता है, वह विनाशात्मक हैं, विभिन्न प्रतीकों का उपयोग करने वाली रचनाओं में यह विनाशात्मक रूप खूब उभरकर आया है । किन्तु इस विनाश से पहले शताब्दियों की घुटन, लाखों मनुष्यों का दारुण हाहाकार है जो क्रान्ति से ही शान्त होता है, वही, क्रान्ति को अनिवार्य बनाता है । क्रान्ति वे करते हैं जो दुखी हैं, दूसरों के दुख को पहचानते हैं । क्रान्ति की मूल प्रेरणा मानव-करुणा है जो मनुष्य का दुख दूर करना चाहती है । क्रान्ति का विनाशात्मक उद्देश्य तात्कालिक और अस्थायी हैं, उसका मूल उद्देश्य रचनात्मक और स्थायी है । **'धारा'** कविता में वर्णित है । करुणा- क्रंदन को रोकना, बन्धनों को ढीला करना सामाजिक क्रान्ति का उद्देश्य है । इसी प्रकार **'उद्‌बोधन'** (अनामिका, पृ. ६७) कविता में जब वह निष्ठुर झंकार द्धारा वीणा से भैरव निर्जर राग उठने की बात कहते हैं, तब उन्हें शताब्दियों तक चलनेवाला जनता का करुणा-क्रन्दन याद आता हैं :

बहा उसी स्वर में सदियों का दारुण हाहाकार सञ्चरित कर नूतन अनुराग ।

दारुण हाहाकार को समाप्त करना, यही क्रान्ति का लक्ष्य है । इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए ही क्रान्ति का अस्थायी विनाशात्मक रूप आवश्यक होता है ।

आकाश से स्पर्धा करने वाले पर्वतों का गर्व धारा के प्रखर वेग से ध्वस्त हो जाता है । उसका जल-प्रवाह देखकर लगता है कि शिव का ताण्डव हो रहा है । पर्वतों के उपलखण्ड बहाती हुई वह ऐसे आगे बढ़ती है मानो नारमुंडमालिनी कालिका हो । किन्तु

इस धारा के श्याम वक्ष पर स्वर्ण-किरण-रेखाएँ भी खेल रही हैं और उस प्रलय-लीला के बीच किरणों का स्पर्श पाकर एक कली खिल खिल गई है । यह क्रान्ति का रचनात्मक पक्ष है ।

श्यामा का नृत्य होगा, असुरों की मुंडमालाओं से वह सज्जित होगी, झंझा उसकी भेरी है, वीणा के तार टूट जाएँगे, कोमल छंद बंद होंगे किन्तु इसके साथ निर्जण वन के वृक्ष अपने कर-पल्लवों से ताल देंगे । विनाश के साथ निर्माण-क्रान्ति से दोनों कार्य संपन्न होंगे । (**'आवाहन', परिमल, पृ. १२७**)

आँधी आएगी, आकाश मचल उठेगा, पीले पत्ते उड़ जाएँगे, साथ ही नये पत्तों के लिए रास्ता खुलेगा, धरती और आकाश नई सुगन्ध से भर जाएँगे । (**'उद्‌बोधन', अनामिका, पृ. ६७**) यहाँ भी क्रन्ति के दोनों पक्ष हैं ।

बादल की बज्र हुंकार सुनकर संसार काँप उठता हैं, बज्रपात से बड़े-बड़े पर्वत क्षत-विक्षत हो जाते हैं ; समाज के धनी जन आतंक-अंक पर अपनी अंगनाओं से लिपटे रहने पर भी काँप उठते हैं किन्तु बादल का वर्णन सुनकर पृथ्वी के हृदय से सोतें हुए अंकुर फूट पडते हैं, बादल का जल अट्टालिका पर नहीं ठहरता वह कीचड़ में पहुँचकर वहाँ कमल खिलता है । **'परिमल'** की **बादलराग-६** कविता में क्रान्ति के दोनों पक्षों का चित्रण हुआ है ।

घन गर्जन से भर दो वन-इस गीत में भूघर थर्राते हैं ; तरु-पल्लवों पर नया जीवन बरसता है । (गीतिका, पृ. ५७) बादल गरजो-(अनामिका, पृ. ८२) धरती निदाघ के ताप से जल उठी है, उसके हृदय को शीतल कर दो, धरती को नया जीवन, नई कविता दो ।

निराला ने गजल लिखी लू से जो झुलसे हुए हैं, क्रान्ति का भरा दौंगरा उन्हीं को नया जीवन देता है ।

शिव का ताण्डव :

डमड डम डमड डम
डमरु निदान है ।
ताण्डव नचे शिव

प्रमाद उन्माद है । (सान्ध्य काकली, पृ. ८४)

क्रान्ति का विनाशकारी रुप-ताण्डव के अतिरिक्त-इन दो पंक्तियों से स्पष्ट हुआ है :

संहारिणी बड़ी

उठती अबाध है ।

इस रचना में समुद्र के बड़े-बड़े जलचरों की व्याकुलता चित्रित करने के साथ निराला छोटी-सी सीपी को नहीं भूले । सीप के सुभग क्षण-यह लिखकर क्रान्ति के दुसरे रचनात्मक पक्ष की ओर उन्होंने संकेत कर दिया है ।

कुछ प्रतीकों को दोहराते हैं, किसी कविता में ये प्रतीक विस्तृत रुप में आते हैं, कहीँ संक्षिप्त और सांकेतिक रूप में । उनकी क्रान्ति-सम्बन्धी रचनाओं को एक साथ पढ़ने से उनकी प्रतीक-योजना स्पष्ट होती है । धारा उपखण्डों को बहाती हुई नरमुंडमालिनी कालिका जैसी लगती है । **'आवाहन'** में इस नरमुंडमालिनी श्यामा का वर्णन है । शिवताण्डव वाले गीत में उसी को निराला फिर स्मरण करते हैं । सत्ताधारी वर्ग के प्रतीत हैं पर्वत ; धारा इन्हीं का गर्व चूर करती है । बादल के बज्रपात से यही क्षत-विक्षत होते है । धारा का वेग क्रान्ति के अदम्य वेग का परिचायक है ; **'आवाहन'** के 'उत्ताल तरंग भंग' में धारा के उसी वेग की प्रतिध्वनि है । शिवताण्डव वाले गीत में समुद्र की विक्षुब्ध जलराशिका चित्रण है किन्तु निरालाने जिस संहारिणी को अबाध उठते हुए दिखाया है, वह समुद्र से अधिक धारा-अथवा समुद्र के अन्दर उसकी एक धारा है । **'बहती कैसी पागल उसकी धारा-**' 'धारा' का यह पागलपन निराला फिर याद करते हैं, शिवताण्डव के प्रवाद उन्माद है- इन शब्दों में । धारा पृथ्वी पर बहती है, आकाश से भी गिरती है । -गीतिका, पृ. ५७) यह वही गीत है जिसमें घन का गर्जन सुनकर भूधर थर्राते हैं । आकाश से झरने वाली धारा विनाश न करके तरु- पल्लवों को नया जीवन देती है । नली के हृदय की गंध भी एक धारा है जो अवरोध पार करके धरती-आकाश में नया सौन्दर्य भर देती है । गन्ध की धारा जल-प्रवाह के ही समान है : (उप.पृ. ७३) क्रान्ति का केन्द्रीय प्रतीक है बादल । भयानक गर्मी के बाद उसके दर्शन होते हैं । ग्रीष्म का त्रास सामाजिक उत्पीड़न का प्रतीक बन जाता है । 'बादल राग' का विप्लवी वीर जग के दग्ध हृदय पर अपनी छाया लेकर

आता है । इसी तरह तप्त धरा में उर को वह शीतल करता है । (अनामिका, पृ. ८२); लू के झोंकों से झुलसे हुए जनों को वह नया जीवन देता है । (वेला, पृ. ८९) वर्षा के साथ ग्रीष्म का अभिन्न सम्बन्ध है ; ग्रीष्म के ताप से ही बादल का जन्म होता है और वर्षा के साथ नये पत्तों का आना, किसानों का खेत में हल चलाना, सारी पृथ्वी का हरियाली से ढक जाना अन्य क्रियाएँ हैं जो बादल को क्रान्ति का सार्थक प्रतीक बनाती हैं । किन्तु निराला सारी बात प्रतीकों के माध्यम से ही नहीं कहते ; 'बादल राग' में धनी वर्ग के साथ खेत में खड़ा हुआ दुर्बल किसान भी मौजूद अनेक रचनाओं में प्रतीक-योजना छोड़कर निराला सीधे जनता की बात कहते हैं ।

निराला की क्रान्तिकारी भावधारा का स्रोत उनकी गंभीर मानवीय करुणा है । जो दलित और उपेषित हैं, वे निराला के स्नेह भाजन हैं । दीन जनों के लिए भी निराला ने अनेक प्रतीक अपनाए हैं । (परिमल, पृ. १४५) दूसरा प्रतीक है प्रपात । पर्वत से बहता, पत्थरों से टकराता, अन्धकार में भटकता है, फिर भी शान्त मन से अपने लक्ष्य की ओर बढता जाता है । (उप.पृ. १४२) प्रतीक योजना छोड्कर निराला दीन जनों का प्रत्यक्ष वर्णन करते है । एक भिक्षुक है जो चुपचाप आँसुओं के घूँट पीकर रह जाता है -उप.पृ. ११५), विधवा, जिसे कोई धीरज नहीं बँधा सकता, कोई जिसके दु:ख का भार हल्का नहीं कर सकता (उप.पृ. १११), बेजमीन किसान बंधुवा, मार खाने से जिसके मुँह से खून बहने लगता है -अलका, पृ. ६६(, निम्न जातियों का प्रतिनिधि चतुरी- "मेरे ही नहीं, मेरे पिताजी के, बल्कि उनके भी पूर्वजों के मकान के पिछवाड़े, कुछ फासले पर, जहाँ से होकर कई और मकानों के नीचे और ऊपर वाले पनालों का, बरसात और दिन-रात का शुद्धा शुद्ध जल बहता है, ढाल से कुछ ऊँचे एक बगल चतुरी चमार का पुश्तैनी मकान है ।" वह चतुरी ; लखनऊ में हीवेट रोड ठंड में बच्चे के साथ भूखी, सिकुड़ती पगली भिखारिन, पद्मदल(अर्थात् महिषादल) राज्य का विश्वम्भर जिसने पेट मल कर राजा को समझाया था, "भूखों मर रहा हूँ- खाने को कुछ नहीं है" (चतुरी चमार, पृ. ३७), 'तुलसीदास' से पीड़ित शुद्रजन-

चलते-फिरते, पर निःसहाय,
वे दीन, क्षीण कंकाल काय-

'दान कविता का भिखारी कंकाल शेष पर मृत्युप्राण- (अनामिका, पृ. २४) 'सेवा-प्रारम्भ' के अकाल- पीड़ित नर-नारी-

दुबले पतले जितने लोग
लगा देश भर को ज्यों रोग,
दौड़ते हुए दिन में स्यार
बस्ती में- बैठे भी गीध महाकार (उप., पृ. १७६)

महायुद्ध के दौरान गहरे आर्थिक संकट के दिनों मे महँगाई और भुखमरी के शिकार (बेला, पृ. ६२)ये सब साम्राज्यवाद से पीड़ित जन थे । फिर पंचवर्षीय योजनाओं और अकूत विदेशी ऋण से समृद्ध नौकरशाही के स्वाधीन भारत में निर्धन किसान (सांध्यकाकली, पृ. ५६)

अभ्युदय काल से अन्तिम दौर तक निराला के मन पर ये दीन जन छाए रहे ; उनके प्रति अगाध करुणा ही क्रान्ति की ओर उन्हें प्रेरित करती है । विपल्वी बादल से नया जीवन पाकर जो छोटे पौधे खेतों में लहलहा उठते हैं, वे यही दीन जन हैं, निराला जिनके भविष्य के सपने देखते हैं ।

निराला के चिंतन में क्रान्तिकारी वीर और जनता का गहरा संबन्ध है, विल्पवी वीर आतंकवादी नहीं, किसानों का पक्ष लेकर लड़नेवाला क्रान्तिकारी है । फिर भी उसमें और किसान जनता में थोड़ा फासला है वह जनता का ही अभिन्न अंग नहीं है । सन् ३० के बाद की रचनाओं में यह फासला प्रायः खत्म हो जाता है । क्रान्ति करना क्रान्तिकारियों ही काम नहीं है ; क्रान्ति जनता करती है, तभी वह सफल होती है । यद्यपि निराला की प्रतीक योजना में विशेष अन्तर नहीं आया, फिर भी यह उल्लेखनीय है कि उनकी क्रान्ति सम्बन्धी चेतना में परिवर्तन हुआ है और परिवर्तन यह हुआ है कि उनकी कविताओं में जनता की क्रान्ति-सम्बन्धी भूमिका और स्पष्ट हुई है, क्रान्ति का उद्देश्य और स्पष्ट हुआ है । भारत के ऐतिहासिक विकास के पूर्णतः उपयुक्त यह समाजवाद की ओर उन्मुख सामन्त विरोधी क्रान्ति है । समाजवाद की ओर उन्मुख इसलिए कि न केवल जमींदारी-जागीरदारी खत्म की जाएगी, वरन, आंशिक रुप से पूँजीपतियों के अधिकार भी नियन्त्रित किए जाएँगे ।

वेला की-'जल्द-जल्द पैर बढाओ' इस कविता में पहली पंक्ति से ही संकेत मिलता है कि जनता स्वयं क्रान्तिकारी आन्दोलन में शामिल हो रही है ।

आज अमीरों की हवेली
किसानों की होगी पाठशाला

इस पंक्तियों में क्रान्ति का सामंत-विरोधी रुप देखा जा सकता है ।

सारी सम्पत्ति देश की हो,
सारी आपत्ति देश की बने-

यहाँ क्रान्ति का वह रुप है जो समाजवाद को ओर उन्मुख है । यह गांधीवादी सत्तापरिवर्तन नहीं है, यह तथ्य निराला ने कविता की अन्तिम पंक्ति से स्पष्ट कर दिया है :

काँटा काटे से कढाओं ।

यह स्वाभाविक था कि कांग्रेसी नेता जिस ढंग से स्वाधीनता आन्दोलन का संचालन कर रहे थे, और जिस तरह की सौदेबाजी करके अंग्रेजों से स्वाधीनता लेने जा रहे थे, उससे निराला को सन्तोष न हो । अनेक रचनाओं में उन्होंने इस समझौते की नीति का विरोध किया 'पाटली है वैठने को गोरे की साँवले से बेला' में इस तरह की अनेक पंक्तियाँ हैं जिनसे समझौतावादी नीति के प्रति निराला की भावना व्यक्त होती है । निराला ने इससे भी बड़ा काम यह किया कि दूसरे महायुद्ध के बाद भारत में जो क्रान्तिकारी उभार आया, उसका अनुपम चित्रण किया । उन सभी क्रान्तिप्रेमी कवियों के पास प्रत्यक्ष क्रान्तिकारी उभार देखने की निगाह नहीं होती जो एक अव्यक्त, अगोचर इष्टदेवीके रुप में क्रान्तिका स्तवन करते हैं ।

निराला सच्चे क्रान्तिकारी कवि थे, इसका प्रमाण नये पत्ते में '**झिंगुर डटकर बोला', 'छलाँग मारता चला गया,' 'डिप्टी साहव आए,' 'महगू महंगा रहा'** जैसी कविताएँ हैं जिनमें अपने अधिकारों के लिए संघबद्ध होते हुए किसानों के संघर्ष और उस संघर्ष की कठिनाइयों का चित्रण किया गया है । इनमें विप्लवी बादल का गर्जन-तर्जन नहीं, कोई प्रतीकव्यंजना नहीं, यथार्थवाद थी भूमि पर-भावबोध के नये स्तर पर-इनकी रचना हुई है

और इन्हीं में क्रान्तिकारी उभार का वह ठोस चित्रण है जो क्रान्ति सम्बन्धी कवि कल्पना से अधिक महत्वपूर्ण है ।

निराला और अन्य वेदान्ती क्रान्तिकारियों में अन्तर यह है कि निराला भौतिक समृद्धि को वांछनीय समझते हैं । व्यापार, उद्योगीकरण, अन्य देशों में आर्थिक सम्बन्ध ये सब निराला कके चिन्तन में सफल क्रान्ति के अन्तर्गत हैं । उनका एक गीत प्रस्तुत है :

जागो, जीवन धनिके !

विश्व- पण्य- प्रिय वर्णिके ! -गीतिका, पृ. १५)

धनिका, वणिका, विश्व-पण्य-गीत के ये शब्द सार्थक हैं । समृद्धि की इस देवी से निराला की प्रार्थना है कि वह जनता के लिए 'बहु जीवनोपाय' प्रस्तुत करे । जीवनोपाय जुटाने के लिए विश्व- पण्य की और ध्यान देना आवश्यक है । लोग कहते हैं कि सरस्वती और लक्ष्मी में बैर है किन्तु निराला इस वैर-भाव की धारणा को स्वीकार नहीं करते । सच्चा ज्ञान जनता की भौतिक उन्नति का विरोधी नहीं, भौतिक उन्नति के नये मार्ग दिखाने वाला है । जिसे वह वणिके और धनिके कहकर संबोधित करते हैं, उसी को भारती, ज्ञान की देवी मानते हैं ।

गांधीवाद से निराला के चिन्तन की भिन्नता हिंसा अहिंसा के प्रश्न को ही लेकर नहीं है, क्रान्ति के भीतरी सामाजिक तत्व को लेकर भी हैं । उनका भारत कुटीर उद्योगों के स्वायत्त ग्राम-समाजों का भारत नहीं है । गीतगुंज में आधुनिक भारत के नव निर्माण की रुपरेखा (पृ. ५३) है । जग का जीवन बदला : व्यापक सामाजिक परिवर्तन हुआ । जो कुछ गँदला था, सामन्ती अवशेष, पुरानी रुढ़ियाँ, अन्धविश्वास, वह सब बह गया । नये वाद, नये गीत, नई कला, इनके साथ नये यान, नये यात्री, वैज्ञानिक साधनों का उपयोग आरम्भ हुआ ।

आधुनिक विज्ञान से पूर्ण लाभ उठाते हुए भारत का विकास हो, निराला की यह धारणा विश्व-पण्य वाली कल्पना के अनुरूप है औद्योगिक विकास न होगा तो दुनिया से व्यापार सम्बन्ध कैसे कायम होंगे ?

गांधीवाद से निराला का मतभेद वैज्ञानिक साधनों के उपयोग को लेकर है । साथ वह वैज्ञानिक साधनों का उपयोग 'सब के लिए' चाहते हैं, मुट्ठीभर पुँजीपतियों के लिए नहीं । निराला पुँजीपतियों को जनता की सम्पत्ति का संरक्षक नहीं मानते वह सम्पत्ति के बड़े उद्योग धन्धों के राष्ट्रीयकरण के पक्ष में हैं : देश को मिल जाय वह पुँजी तुम्हारी मिल में हैं ।

निराला का क्रान्तिकारी दृष्टिकोण उन संकीर्ण राष्ट्रवादियों से भिन्न है जो भारत की उपासना करते हुए भारतीय जनता का दुख-दर्द भूल जाते हैं, जिन्हें सामंती पूँजीवादी उत्पीड़न दिखाई नहीं देता, जो देश के विकास के लिए समाजवाद को अनावश्यक समझते हैं । जो वास्तव में क्रान्तिकारी है, वह निराला की तरह संकीर्ण राष्ट्रवादी धारणाओं से मुक्त होगा ।

निराला की क्रान्ति-सम्बन्धी कविताएँ औसत प्रगतिवादी रचनाओं से भिन्न हैं । प्रगतिवादी कवियों ने पुँजीवाद के खिलाफ तो बहुत लिखा लेकिन साम्राज्यवाद और उसने मुख्य सहायक सामन्तवाद के बारे में वे सामान्यतः चुप रहे । निराला साहित्य में भारतीय क्रान्ति का सामन्त विरोधी पक्ष जैसा उभरकर आया है, वैसा प्रेमचन्द के अलावा किसी हिन्दी लेखक की रचनाओं में उभरकर नहीं आया । औसत प्रगतिवादियों और निराला में यह अन्तर है कि अंग्रेजी राज में पुँजीवाद को कोसनेवाले कविगण भारतके स्वाधीन होने पर समाजवाद की बातें भूल गए । अनेक लेखकों ने समाजवादको तानाशाही का पर्यायवाची माकर तरह-तरह से पूँजीवाद का समर्थन किया । निरालाकी क्रान्ति सम्बन्धी भावधारा सन् ४७ के बाद प्रवाहित करती है ।

अपने युग की विचारधाराओं के बीच निराला की दृष्टि उन्नत है । वह परिवेश को देखती है, भविष्यको भी । प्रभामंडलों से आतंकित न होकर वह सामाजिक सम्बन्धों के आन्तरिक सूत्रों तक पहुँचती है । इसी लिए क्रान्तिकारी कवियों में निराला का स्थान अन्यतम है ।

४.३ नया मानवतावाद

निराला हिन्दी साहित्य में नये मानवतावाद के प्रतिष्ठापक हैं । संसार की आलोचना करके वैराग्य की शरण लेने वाला मनुष्य उनके साहित्य का केन्द्रविन्दु नहीं है । उनका मानव साधारण मनुष्य की तरह जीता है, सांसारिकता से बंधा हुआ कर्म करता है, संघर्ष में भाग लेता है और उसके कर्म और संघर्ष का लक्ष्य इसी संसार में अपना या दूसरों का कल्याण है । निराला साहित्य में मर्यादा पुरुषोत्तम राम हैं, अन्य मनुष्य की तरह पराजय की पीड़ा और हानि का अनुभव उन्हें भी होता है । यह पीड़ा और हानि नर रुप में ब्रह्मकी लीला नहीं है., वह नर का सहण मानवोचित व्यवहार है । निराला के लिए वेदान्त का अर्थ राजनीतिक संघर्ष से कतराना नहीं, उसमें भाग लेना है । उनके साहित्य के केन्द्र में वह मनुष्य है जो श्रम करता है, सम्पत्ति और सुख के साधनों से वंचित है, विषम परिस्थितियों से जूझता है, गिरता है, फिर आगे बढ़ता है । निराला के हिन्दी साहित्य में मनुष्य की कर्मठता, वीरता, धैर्य, आन्तरिक द्वन्द्ध, उसकी अपार जिजीविषा के चित्रकार हैं ।

निराला का मानवतावाद हिन्दी साहित्य में उनके अभ्युदयकाल से आरम्भ होता है और अन्तिम दौर तक निरन्तर गहरा होता जाता है । निराला ने जिस वीरता का चित्रण किया है वह जीवन संग्राम की जीरता है, वह उस मनुष्य की वीरता है जो दुख और पराजय संघर्ष की कठिनाइयों और मार्ग के अवरोधों से भली-भाँति परिचित है ।

'बादल राग' का विप्लबी बादल अतिमानव के सबसे निकट है । उसके वज्रप्रहार से भूधर क्षत-विक्षत होते हैं, समाज के आतंकवादी शोषक उसकी बज्र-हुँकार से ही काँप उठते हैं । किन्तु यह विप्लवी वीर दुःख से परिचित है, दूसरों के दुःख से ही नहीं, स्वयं भी दुःख का अनुभव कर चुका है । निराला की कविता यों शुरु होती है :

तिरती है समीर-सागर पर

अस्थिर सुख पर दुःख की छाया

जग के दग्ध हृदय पर

निर्दय विप्लव की प्लावित माया ।

एक तरफ जग का दग्ध हृदय है, दूसरी तरफ बादल स्वयं दुख की छाया है । नीचे अस्थिर सुख, उपर दुःख की छाया यह है निराला का क्रान्तिकारी वीर दुःख की इस अनुभूति के कारण वह अतिमानव बनने से बच जाता है ।

कवि ने जिस करुणा- क्रन्दन के रुकने की बात कही है, वह क्या इसी बालिका का करुणा- क्रन्दन नहीं है ? धार क्रान्ति की अतिमानवी देवी नहीं है : दुःख से परिचित, सतत विकासमान बालिका से कालिका बनने वाली नारी है ।

'आवाहन' की श्यामा साक्षात् देवी है, असुर उसके मार्ग के अवरोध हैं किंतु वे नगण्य है । उसके मार्ग में एक अन्य अपराजेय शुत्र है-मृत्य । श्यामा का नृत्य अमरता और मृत्यु का कभी न खत्म होने वाला संघर्ष है :

भैरवी भेरी तेरी झंझा

तभी बजेगी मृत्यु लड़ाएगी जब तुझसे पंजा ।

जैसे राम और रावण का युद्ध हो, वैसा कुछ श्यामा से मृत्यु का यह पंजा लड़ाना है । मृत्यु परास्त हो जाएगी, केवल अमर जीवन रहेगा, ऐसा कोई संकेत कविता में नही है । विप्लवी बादल यदि दुःख की छाया है तो 'आवाहन' की श्यामा मृत्यु का साक्षात्कार करने वाली मानव-शक्ति है । मानव-शक्ति इसलिए कि जो मानवेतर है, उसके लिए मृत्यु नहीं । संसार के शरीर धारी जीव ही मर्त्य है, मृत्यु उन्हीं के लिए है मृत्यु से उन्हीं का संघर्ष है ।

जागो फिर एक बार (२) के गुरु गोविन्द सिंह इसी मृत्यु के भय पर विजयी होते हैं, दूसरों को विजयी होना सिखाते हैं । मृत्यु से श्यामा के पंजा लड़ाले वाली बात यहाँ और स्पष्ट हो गई है । मृत्य से संघर्ष है मानव-शक्तिका । गुरु गोविन्द सिंह का मार्ग अवरोधें से भरा हुआ है और इन अवरोधों का सारतत्व है एक महा अवरोध मृत्यु-भय । इस अवरोध पर विजय पाने के बाद -

सवा सवा लाख पर
एक को चढाऊँगा,
गोविन्द सिंह निज

नाम जब कहाऊँगा

यह अतिमानव वीर की अतिशयोक्ति नहीं रह जाती ।

मनुष्य की वीरता के साथ छिपे हुए हैं । सिंहों की मांद में आया है आज स्यार- इस पंक्ति और उसमें ध्वनित भावों की आवृत्ति ' महाराज शिवाजी का पत्र' में है :

सिंह भी क्या स्वाँग कभी

करता है स्यार का ?

शिवाजी का इस पत्र में देशवासियों की निष्क्रियता, परधीनता से समझौता, आत्म सम्मान के अभाव के प्रति शेष और ग्लानी के भाव सजग है । औरंगजेब को विजयी बनाने में राजपूत सामन्तों के योगदान से यहाँ ऐसी आत्मग्लानी का भाव उदय हुआ है, जो व्यक्तिगत न होकर राष्ट्रिय है । शिवाजी का प्रयत्न इस आत्मग्लानि के भाव को दूर करने के लिए है । यह प्रयत्न सरल नहीं, अतिमानव का लोकोत्रर चमत्कार नहीं । **'राम की शक्तिपूजा'** के राम जिस संशय से ग्रस्त होकर कुछ समय के लिए किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाएँगे, उसका पूर्वाभा ' महाराज शिवाजी का पत्र' में है :

सोचता हूँ अपना कर्तव्य अब

देश का उद्देश्य,

पर, क्या करुँ मैं,

द्विधा में पड़े हैं प्राण ।

दुविधा में अतिमानव वीरों के प्राण नहीं पड़ते, उनके लिए इच्छा करना भर काफी है, विजय सुलभ होने में देर नही लगती । निराला के शिवाजी मानव हैं, अतिमानव नहीं । दुविधा का कारण यह है कि यदि वह राजा जय सिंह से मिल जाएं तो उनके शत्रु कहेंगे कि डरकर मिल गया है, यदि युद्ध करें तो दोनों ओर हिंदुओं का खून बहेगा । इस दुविधा की स्थिति पर विचार करते हुए हृदय से आह निकल पड़ती है । देश की परिस्थितियों से उत्पन्न हुई वेदना शिवाजी का हृदय बेध डालती है । साथ ही 'बादल-राग' के विप्लबी

वीर की तरह यहाँ भी शिवाजी को दूसरों के दुःख की मार्मिक अनुभूति हुई है । जिस योद्धा को जनता के दुःख की अनुभूति नहीं, उसकी वीरता क्रूरता है, वीरता का प्रदर्शन मात्र है । रीतिवादी कवियों के वीर-रस में इस दुःखात्मक अनुभूति का अभाव है, निराला के उदात्त, करुणामिश्रित, ओजपूर्ण काव्य और उस शास्त्रानुमोदित परम्परागत वीर काव्य में यही अन्तर है । क्रान्तिकारी वीर की तलवार पर जो पानी चढ़ाया जाता है, वह दुखियों की आँखों में है । जिसने वे आँखें नहीं देखीं, वह वृथा ही जन्मभूमि का नाम लेता है, वह जन्मभूमि के सन्ताप से परिचित नहीं ।

'धारा,' 'आवाहन,' 'बादल राग' (६), जागो फिर एक बार (२) और 'महाराज शिवाजी का पत्र'- इन कविताओं को इस क्रम से पढ़ा जाय तो निराला के मानवतावाद के विकास की दिशा समझ में आ जाएगी । अतिमानव की जो झलक प्रारम्भिक रचनाओं में है, वह क्रमशः क्षीण होती जाती है, सामान्य मानवता का वोध और गहरा होता जाता है । जैसे-जैसे आन्तरिक ग्लानी और पीड़ा का बोध तीव्र होता है, वैसे ही जिन परिस्थितियों में संघर्ष करना है, उनकी रूपरेखा और साफ दिखाई देती है । उसी अनुपात में मनुष्य की दृढ़ता, संघर्ष में पैर जमाए रहने की क्षमता भी मानो बढ़ाती जाती है ।

निराला की 'तुलसीदास' रचना कवि कर्म की उदात्त विजयगाथा है । सब कुछ व्यर्थ हो जाय, काव्य-साधना कभी व्यर्थ नहीं होती । जो वीर थे उन्होंने वीरमति प्राप्त की, जो कायर थे, वे नई सत्ता के स्तम्भ बने । देश के उद्धार का बीड़ा उठाया कवि ने । आसक्ति, कुतर्क और विरोधी संस्कारों से जूझते हुए रत्नावली की सहायता से, तुलसीदास अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते हैं ।

राम योद्धा है, ज्ञानी है, राजा है । पराजय के क्षणों में सीता की छवि राम के मन में कौंध जाती है । तुलसीदास की मुक्ति रत्नावली को छोड़ने में थी, राम की सिद्धि सीता को पुनः प्राप्त करने में है । राम का लक्ष्य पापियों का उद्धार करना अथवा पुण्यात्माओं के लिए स्वर्ग रचना नहीं, राक्षसों का पराभव, लंका में विभीषण का राजतिलक सीता के साथ अयोध्या लौटकर राज्य संभालना यही लौकिक उद्देश्य है । राम अकेले नही हैं, उनके साथ एक विशाल सेना है । लक्ष्मण हैं, सौ शक्तियों में महशक्ति महावीर हैं । चतुरी चमार भी अकेला नहीं है, उसके साथ गाँव के और किसान हैं, स्वयं निराला हैं । चतुरी श्रमिक है, उस संसार को बहुत कम पहचानता है जिससे उसे संघर्ष करना है । लेकिन वह जीवन

संग्राम में परास्त होकर भागता नहीं है । उसकी आँखों में आँसू नहीं, होठों पर मुसकान है ।

'गोदान' में धनिया जहाँ पछाड़ खाकर गिरती है, मानवतावाद में उसके बाद की कड़ी है निराला का चतुरी चमार ।

चतुरी एक पूरे आन्दोलन के बहाव के साथ आगे बढ़ता है किन्तु 'देवी' कहानी की पगली भिखारिन अकेली है । सड़क है, जुलूस है, नेता है, फिर भी पगली अपने बच्चे के साथ अकेली है । सामने होटल में कवि हैं, उनके मित्र हैं किन्तु इनकी सहायता सीमित है । वे जीवन-संग्राम में पगली की रक्षा नहीं कर पाते । एक शक्ति की पूजा 'राम की शक्तिपूजा' में है, एक शक्ति का प्रत्यक्ष दर्शन 'देवी' कहानी में है । निराला की यह शक्ति भी खूब है । अप्रत्याशित अवसरों पर अद्‌भुत रुपों में प्रकट होती है । उनकी शक्तिपूजा का राष्ट्रीयता से, जनतन्त्र से, मानवतावाद से क्या सम्बन्ध है, इन पंक्तियों में देखा जा सकता है :-

"महाशक्ति का प्रत्यक्ष रूप संसार को इससे बढ़कर ज्ञान देने वाला और कौन सा होगा ? राम, श्याम और संसार के बड़े-बड़े लोगों का स्वप्न सब इस प्रभात की किरणों में दूर हो गया । बड़ी-बड़ी सभ्यता, बड़े-बड़े शिक्षालय चूर्ण हो गए । मस्तिष्क को घेरकर केवल यही महाशक्ति अपनी महत्ता में स्थित हो गई । उसके बच्चे में भारत का सच्चा रूप देखा, और उसमें क्या कहुँ, क्या देखा ।"

भारत का एक रूप गदाधारी महावीर हैं, दूसरा रूप पगली का यह बच्चा है । एक महाशक्ति वह है जो राम के मुख में लीन हो जाती है, दूसरी महाशक्ति वह है जो पगली के रूप में प्रत्यक्ष है । महाशक्ति प्रत्यक्ष होती है पगली के जीवन संघर्ष में उसके अटूट धैर्य । उसकी अपराजेय वीरता में । निराला का मानवतावाद उसी वीरता का प्रतिष्ठापक है, यही उसकी विशेषता है ।

निराला ने साहित्य में जिस मानवतावाद की प्रतिष्ठा की उसके विकास का इतिहास भारतीय जन-आन्दोलन के उतार चढ़ाव का इतिहास है । दुख और पराजय का ज्ञान, संघर्ष की कठिनाइयों और मार्ग के अवरोधों का चित्रण, मनुष्य के धैर्य और उसकी वीरता की

अभिव्यंजना-निराला के मानवतावाद की विशेषताएँ हैं । उनके देशप्रेम से, उनकी क्रान्तिकारी भावना से, उनका मानवतावाद पूर्णतः संबद्ध है ।

नवनिर्माण और विनाश

निराला के साहित्य में कविता और क्रान्ति का गहरा सम्बन्ध है । उनके क्रान्तिकारी वीर या तो स्वयं कवि हैं या संगीत और कविता के प्रेमी हैं । विप्लवी बादल के पास एक भेरी है जो अपने गर्जन से धनी वर्ग को कँपाती है, साथ ही उससे कोमल स्वर भी फूकते हैं, जिन्हें सुनकर पृथ्वी के हृदय से नये अंकुर फूटते हैं -

स्वरारोह, अवरोह, विजात,

मधुर मन्द,उण्ठ पुनः पुः ध्वनि

छा लेती है गगन, श्याम कानन

सुरभित उद्यान - (परिमल, पृ. १५५)

सामाजिक क्रान्ति में साहित्य की महत्वपूर्ण भूमिका है, यह भी सत्य है कि सामाजिक क्रान्ति सार्थक तब है जब उससे भाषा और साहितय का विकास हो । इसीलिए निराला साहित्य में कवि और क्रान्तिकारी का यह तादात्म्य है । स्वभावतः उनकी अनेक रचनाएँ ऐसी हैं जो समाज और साहित्य दोने के सन्दर्भ में सटीक बैठती हैं । 'जला दे जीर्ण प्राचीन' गीतिका के इस गीत में सामाजिक रुढियों का विरोध है, साहित्यिक रुढियों का भी । ' उद्‌बोधन' कविता में नये-पुराने पत्ते साहित्य और समाज दोनों के लिए सार्थक प्रतीक हैं । निराला साहित्य जगत की अपनी विशिष्ट क्रान्ति के कवि हैं ।

साहित्य जगत की क्रान्ति एक ओर प्राचीन रुढियों का नाश करने वाली है, दूसरी ओर वह जीवन्त साहित्यिक परम्परा की रक्षक भी है । समाज की अपेक्षा साहित्य में परम्परा की रक्षा के प्रति निराला का आग्रह अधिक है ।

विश्व की ही वाणी प्राचीन

आज रानी बन गई नवीन- गीतिका, पृ. ६८

हिन्दी के आधुनिक साहित्य का विकास रीतिवादी रुढियों का तीव्र विरोध करते हुए ही सम्भव हुआ है । निराला में एक ओर तुलसी-कबीर-दादू-मीरा-रैदास के प्रति सम्मान की भावना है, दूसरी ओर रीतिवादी रुढियो का तीव्र विरोध है । 'मित्र के प्रति' कविता - अनामिका, पृ. १०) में हिंदी साहित्य के इस आन्तरिक संघर्ष का चित्रण हुआ है ।

निराला का जीवन हिन्दीमय है, हिन्दी उनके लिए साहित्य साधना का माध्यम है अपने में स्वयं एक साध्य है । निराला की आस, श्रद्धा, सर्वाधिक प्रेम का अधिष्ठान है भाषा-संघर्ष के विकट क्षणों में अप्रतिहत विश्वास से वह भाषा का गौरव-गीत गाते हैं -

बुझे तृष्णाशा- विषानल झरे भाषा अमृत- निर्झर,

उमड़ प्राणों से गहनतर छा गगन लें अवनि के स्वर । (गीतिका, पृ. ९४)

ये जो धरती से उठकर आकाश पर छा जाने वाले प्राणों के स्वर हैं, वे हिन्दी भाषा के स्वर है । छन्द की गति से, उदान्त शब्द सौन्दर्य से, भाव-चित्र की गरिमा से निराला जिसका भविष्य चित्रित कर रहे हैं, वह आधुनिक हिन्दी है ।

भाषा की वंदना के प्रसंग में फूल वाले प्रतीक का उपयोग वह अकसर करते हैं -

अनगिनित आ गए शरण में जन, जननि-

सुरभि-सुमनावली खुली, मधुक्रृतु अवनि !

(गीतिका, पृ. १८)

जैसे निराला की अनेक रचनाएँ साहित्य और समाज दोनों पर लागू होती हैं वैसे ही उनके अनेक गीत सरस्वती और आदिशक्ति-भाषा और प्रकृति दोनों पर लागू होते हैं । शक्ति और सरस्वती में निराला के लिए विशेष अन्तर नहीं । शक्ति एक है जो भाषा के रूप में प्रत्यक्ष होती है । 'सांध्याकाकली' में वे शुरु से अन्त तक भाषा और साहित्य की देवी का स्मरण करते हैं ।

अनेक रूपों में निराला ने सरस्वती को याद किया है । वह संघर्ष से अलग, संघर्ष के फलस्वरुप प्राप्त होने वाली सिद्धि है, वह दुखी संघर्षरत कवि को प्यार-दुलार से ढाढ़स बंधाने वाली माँ हैं, वह संघर्ष में सक्रिय प्रेरणा देने वाली शक्ति भी है ।

निराला के भाव-बोध की एक विशेषता यह है कि देवियों और प्रतीकों से बंधे रहने पर भी वह ठोस यथार्थ की धरती को भूलते नहीं है । जीवंत परम्परा का उद्धार, जर्जर रुढ़ियों का बहिष्कार । एक संघर्ष तुलसीदास का, दूसरा प्रसाद का, तीसरा निराला का जिन्होंने हिंदी साहित्य के नवनिर्माण में अपना अमूल्य योगदान दिया ।

प्रकृति पूजा-

निराला ने जितनी कविताएँ ब्रह्म पर लिखी है, उनसे अधिक माया, प्रकृति अथवा शक्ति पर लिखी हैं ।

वेदान्ती कवि के लिए उचित था कि वह अगोचर मायातीत ब्रह्म के गीत गाता, माया की चर्चा करता तो सन्तों और वैरागियों की तरह स्वयं और दूसरों को उससे सावधान करने के लिए । किन्तु निराला- साहित्य में ब्रह्म से अधिक उनकी साधना का लक्ष्य माया है ।

इनकी रचनाओं मे माया की भूमिका अनेक प्रकार की है । वह मानवीय करुणा है जो कवि को प्रेरित करती है कि वह अपने दुखी भाई को गले लगाए । वह किसी दुखी की आह है या विधवा की चिन्तारूपी चिता, वह क्रान्किारी शक्ति है जो जीर्ण-जीर्ण प्राचीन को जला देती है, वह जनता को स्वाधनीता की और बढ़ने की प्रेरणा दे सकता है, युद्ध में जब मनुष्य परास्त होता है, तब इसी शक्ति की साधना करता है । रावण से परास्त होने पर राम ब्रहमा की नहीं, शक्ति की पूजा करते हैं । युद्ध, क्रान्ति, संघर्ष, स्वाधीनता आन्दोलन से इस प्रकृति, शक्ति अथवा माया का गहरा सम्बन्ध है ।

वह कवि की साधना क लक्ष्य है, इसके हृदय की प्रेरणा भी है । जब तब निराला प्रकृति को ब्रह्म के साथ याद करते है, 'तुम और मैं' कविता में ब्रह्म के साथ प्रकृति का गुण कीर्तन है । अन्यत्र जो प्रकृति जगत् की पलकों पर आसीन है, वह प्रिय के ध्यान में लीन हैं -

प्रकृति बैठी पालने, अतंद

जगत के पलकों पर आसीन

खुला जीवन में प्रणय-सुहाग

कुला प्रिय अकल ध्यान में लीन (गीतिका, पृ. ७८)

भारतीय दर्शन में जो पाँच तत्व प्रसिद्ध है, वे सब शक्ति के प्रतीक है, शक्ति के विभिन्न रूप हैं । शक्ति एक है, अद्धितीय है, इसलिए पाँच तत्व देखने में पाँच हैं, वास्तव में तत्व एक है । जो आकाश है, वही बदलकर पृथ्वी बनता है, जो पृथ्वी है वह जल बनती है, जो जल है वह हवा या आकाश बन जाता है । यह निराला का प्रकृति-अद्धैव दर्शन है जो अनेक कविताओं में तरह-तरह से चित्रित हुआ है ।

'कौन तम के पार' गीत में आकाश ही जल, पृथ्वी, वायु अग्नि के रूप में प्रत्यक्ष होता है । निराला काव्य में पाँच तत्वों का शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व है । शक्ति का विभाजन, पंचतत्वों का आन्तरिक संघर्ष 'राम की शक्ति पूजा' की विशेषता है । अन्य कविताओं में प्रकृति एक ओर अविभाज्य है । पंचतत्व प्रकति के ही अनेक रूप हैं । वे सब मूलतः एक हैं, शक्ति है । विभिन्न ऋतुओं में पृथ्वी का परिवर्तित सौन्दर्य उसी शक्ति का सौन्दर्य है -

चकित चपला के नयन नव,

देखती हो भूशयन तव,

मन्द लहरा पट पवन, ख

छा रहा सब देश । (गीतिका, पृ. ४८)

चपला के रूप में तेज, भूशयन के उल्लेख में पृथ्वी, पट जैसा लहराता पवन, सर्वत्र छा जाने वाले शब्द के माध्यम से, आकाश और वर्षा के रूप में जल पाँचो तत्व मेघ के घन केश वाली प्रकृति प्रिया के रूप में लक्षित है ।

'बादल में आए जीवन घन'- पहले आकाश जहाँ बादल आया है, फिर हवा जिससे शरीर पुलकित है, लक्ष्य पार करने वाली तेजरूप चितवन, फिर वर्षा, अन्त में धरती पर नये अंकुर । बादल आए और-

मुक्त हुए आ स्नेह के क्षितिज ।

रूप-स्पर्श-रस-गन्ध-शब्द घन ।

पहले पाँचो तत्वों की ओर संकेत, अन्त में उनके गुणों का स्पष्ट उल्लेख । यह स्पष्ट उल्लेख सिद्ध करता है कि निराला जान- बूझकर गीतों में पंचतत्व वाली गोचर प्रकृति का चित्रण करते हैं ।

निराला की रचनाओं में प्रकाश और किरण का उल्लेख बार-बार किया गया है । किरण या प्रकाश व्यापक शक्ति का प्रतीक है, प्रतीक का आधार भी, क्योंकि जिन अनेक रुवों मनुष्य को शक्ति का बोध होता है, उनमें एक प्रकाश भी है । जहाँ प्रकाश होगा, वहाँ उसके आसपास अक्सर वर्ण-गन्ध वाले फूल भी होंगे ।

"कौन तुम शुभ्र- किरण-वसना ?" -गीतिका, पृ. ३२) यह प्रकृति की देवी है जो कवि के मन में, उसके चारों ओर उल्लास भारती और बिखेरती है । मलय पवन में उसके तन की गन्ध है, बादल उसकी समस्त गोचर सौन्दर्य प्रत्यक्ष है ।

प्रकृति में सभी तत्व है, भाव और रस हैं । श्रृंगार के साथ उसमें करुण और वीभत्स की स्थिति भी है । वह कवि की प्रिया है, माता भी । 'सकल गुणों की खान, प्राण तुम' -गीत की प्रथम पंक्ति से लगता है, प्रिया को संवोधित कर रहे हैं । किन्तु जो देवी सकल गुणों की खान हैं, वह वीणा भी बजाती है-

अमलासन पर बैठ, प्रभा तन,

वीणा-कर करती स्वर-साधन ।

प्रकृति में मातृत्व है, प्रेयसीत्व है, उसमें जीवन है, मृत्यु भी है, प्रकाश के साथ अन्धकार है-

खोलो दृगों के द्वय द्वार,

मृत्यु-जीवन ज्ञान-तम के

करण, कारण-पार । (गीतिका, पृ. ४६)

उसके नेत्रों मृत्यु है, जीवन है, ज्ञान है, अन्धकार है । यह रहस्यवादियों का प्रकाश नहीं है जिसमें मृत्यु और अन्धकार तिरोहित हो जाते हैं, यह निरन्तर परिवर्तनशील प्रकृति है जिसमें मृत्यु के बिना जीवन की कल्पना से जीवन-मृत्यु वाली प्रकृति की धारणा भिन्न है । निराला साहित्य में जिसका बार-बार स्तवन है, वह मायातीत नहीं, मायामय है, स्वयं माया है । वह पंच तत्वों से परे नहीं, अज्ञानमय भी है, उसमें प्रकाश के साथ अन्धकार, जीवन के साथ मृत्यु, श्रृंगार के साथ वीभत्स है ।

निराला ने अपने साहित्य में प्रकृति के पंच-तत्वों का खुलकर वर्णन किया है ।

माया और ब्रह्म

निराला साहित्य में भावबोध के रूप में माया और ब्रह्म को भी स्थान प्राप्त हुआ है । माया विरोधी ब्रह्म के दर्शन सबसे पहले 'पंचवटी-प्रसंग' में मिलते हैं । 'पंचवटी प्रसंग' के राम लक्ष्मण को वेदांत ज्ञान समझाते हैं । व्यष्टि और समष्टि में जहाँ भेद दिखाई देता है, उसका कारण भ्रम है । इस भ्रम का ही नाम माया है । माया अथवा भ्रम का नाश करके ही ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति सम्भव है ।

'अर्चना' में बहुत स्पष्ट प्रार्थना की गई है -**माया का संहार करो हे'** । 'आराधना' में कहते हैं -

'ज्ञान की तेरी तुरी है, आसुरी माया दुरी है ।'

'राम की शक्ति पूजा' में राम का मन मायावरण पार कर जाता है, फिर भी वह शक्ति की पूजा करते हैं और अन्त में शक्ति उनमें समा जाती है ।

माया की भूमिका अनेक प्रकार की है, वैसे ही ब्रह्म की । 'तुम और में' कविता में ब्रह्म प्रेममयी का कंठहार है, गंध और पराग है, वसंत है, कामदेव है, कृष्ण है, सुरापान है । निराला साहित्य में एक ब्रह्म वैष्णव कवियों की परम्परा के अनुरुप सगुण और लीलाप्रेमी

है, दूसरा शङ्कर अद्वैत परम्परा के अनुरुप निर्गुण और मायातीत है । तीसरा ब्रह्म और है जो न लीलाप्रेमी है, न मायातीत है, वरन इसी संसार के सौन्दर्य में प्रत्यक्ष होता है । कालिदास और जयशंकर प्रसाद की आनन्दवादी परम्पष्रा के अनुरूप यहाँ माया और ब्रह्म का द्वैव भाव मिट जाता है, ब्रह्म संसार से परे न होकर इसमें अन्तर्निहित है ।

आँख आँख पर भाव बदल कर

चमके हो रंग छवि के पल भर,

पुन : खोलकर हृदय-कमल कर,

गन्ध बने अभिधान तुम्हारा । -अर्चना पृ. ५)

निराला काव्य में अनेक ब्रह्म है या यू कहें कि ब्रह्म की भूमिका अनेक प्रकार की है । माया और ब्रह्म में अनेक समानताएं हैं, कुछ महत्वपूर्ण भेद भी । प्रकृति के सौंदर्य से, मानव करुणा से, राष्ट्रीय स्वाधीनता और सामाजिक क्रान्ति से ब्रह्म का सम्बन्ध वैसे ही है जैसे माया का । किन्तु माया का एक रूप वह है जो सुख के साथ दुख, जीवन के साथ मृत्यु लिए हुए हैं, जिसकी व्यंजना 'मतवाला' के 'अमिय गरल शशि सीकर रविकर' छन्द में हुई हे । ब्रह्म दुख दूर कर सकता है किन्तु स्वयं दुखरूप नहीं है । मृत्यु और शक्ति से गहरा सम्बन्ध प्रकृति का है, ब्रह्म का नहीं । संसार को प्रकार और शक्ति से गहरा सम्बन्ध प्रकृति का है, ब्रह्म का नहीं । संसार को प्रकाश और आनन्द से भरने का काम मुख्यत : ब्रह्म का है, प्रकृति का नहीं । प्रकृति जिस आनन्द का स्रोत है वह अधिकतर रूप-रस-शब्द-गन्ध-स्पर्श वाला आनन्द है, अगोचर आध्यात्मिक आनन्द नहीं । निराला ने अपनी भक्ति परक रचनाओं में जहाँ प्रकति की वंदना की है, वहाँ आत्मीयता अधिक, है स्नेह है, मृत्यु का वरण करने की चुनौती भी है । जहाँ प्रभु अैंर दास वाला सम्बन्ध है, वहाँ प्रकृति से अधिक ब्रह्म ही इष्टदेव बनकर सामने आते हैं । काम, क्रोध, मद, लोभ से छुटकारा पाने की प्रार्थना भी वह प्रभु से ही ज्यादा करते हैं ।

आकाश और धरती

निराला काव्य में सामान्यत : जिस संसार का चित्र मिलता है, उसमें धरती और आकाश परस्पर सम्बद्ध है । धरती छोड़कर आकाश में विचरने से मुक्ति पाने का सवाल नहीं, धरती और आकाश दोनों की अलग-अलग भूमिका है । आकाश मन है, कल्पना है । आकाश को देवी वाले इसी धरती पर है । कुदकली की आँखें नील गगन की ओर हैं, वह खिली है धरती पर । चाँदनी रात में गंगा तट के दृश्य का वर्णन करते हुए निराला ने लिखा है-'बैठा देखता हूं तारतम्य विश्व का सघन' । जहाँ विश्व के सघन तारतम्य का बोध है, वहाँ धरती और आकाश एक ही यथार्थ के दो अभिन्न अंग है यद्यपि दोनों की भूमिका अलग-अलग है । यदि आकाश कल्पना है तो पृथ्वी देह है । पृथ्वी स्थूल है, आकाश सूक्ष्म है ।

विश्व के तारतम्य में जैसे पृथ्वी और आकाश दोनों आवश्यक हैं, वैसे ही मानव जीवन में देह और कल्पना आवश्यक है । कल्पना को बड़ा मानकर देह को अस्वीकार करना गलत है ।

आकाश से धरती पर आती चाँदनी उतनी सुन्दर नहीं जितनी अंधकार पार करके आकाश पर चढ़ती हुई नरगिस की सुगन्ध । निराला के भावों की जडें खेतों में हैं, सुख के भावों की, दुख के भावों की भी । यहीं से कल्पना की लताएं आकाश की ओर लहराती हुई पल्लवित और विकसित होती है । जो स्वर आकाश में छा जाते हैं, वे धरती के स्वर हैं, वहीं प्राणों से उमड़ने वाले स्वर हैं । यह धरती की शक्ति का उर्ध्व-संचरण है ।

आज वह याद है वसन्त

जब प्रथम दिगन्त श्री

सुरभि धरा के आकांक्षित ृदय की

दान प्रथम हृदय को

था ग्रहण किया हृदय ने । (रेखा, अनामिका, पृ.७७)

धरती और देह दोनों का आन्तरिक स्पन्दन निराला एक साथ सुनते हैं । उन्होंने अपने कविता संग्रह का नाम रखा है-परिमल' । यह नाम धरती की गन्ध, देह के संगीत का प्रतीक है । 'परिमल मधु लुब्ध मधुप करता गुंजार'- परिमल का लोभी यह भ्रमर निराला का आनन्द कामी मन है । धरती को पुलकित करती हुई परिमल के शीतल पलक मारकर जो हवा चलती है वह प्रणय का संदेश लेकर आती है । पृथ्वी की गन्ध लिए बसन्ती हवा का स्पर्श सुख मिलने पर निराला को सहज ही रमणी के अंगराग का स्मरण हो आता है-सुरभ सुमन्द में हो जैसे अंगराग गन्ध ।

निराला काव्य में देह, पृथ्वी, गन्ध, सृजन, तृप्ति का पूरा दर्शन है । यह दर्शन वेदान्त से घटकर नहीं, उसका ज्ञान भी मुक्ति के लिए आवश्यक है । तरु और लता यौवन और प्रणय के चित्रण के लिए सनातन काल से कवि इन प्रतिमानों का उपयोग करते आये हैं । निराला के प्रकृति अद्वैत दर्शन में धरती की जो भूमिका है, उसे देखते हुए वे पुराने प्रतिमान नये अर्थ से दीप्त हुइ हैं । जो मन संवेदन भूमि से बँधा हुआ है, अपनी जड़ों से धरती का रस खींचता है, वही तृप्ति सुख का अनुभव करता है, उसी की सृजन शक्ति जीवन में प्रतिफलित होती है ।

धरती के सौन्दर्य, वैभव और सृजनशीलता की ऋतु है वसन्त । देश और काल परस्पर सम्बद्ध है । धरती हंसती है, वर्ष हँ सता है ।

निराला काव्य में प्रकृति सौन्दर्य का अनुपम चित्रण है, उसका अपना एक दर्शन है । यह दर्शन उनके गद्य लेखों में वैसा ही निरुपित नहीं हुआ, जैसा काव्य में दिखाई देता है । इस दर्शन में पृथ्वी और आकाश, देश और काल परस्पर संवद्ध है । धरती या देह समस्त सौन्दर्य की आधारभूमि है । भाव और कल्पना की जड़ें मानव-संवेदनों में हैं । सघन इन्द्रिय बोध से ही भाव और विचार कल्पना के आकाश की ओर उठते हैं, इसलिए आनन्द केवल मन का आनन्द नहीं, तन का आनन्द भी है, वसन्त की छवि केवल प्रकृति में नहीं, मानव जीवन में भी है । आनन्द की अतिशयता में रूप-रस-गन्ध आदि का बोध तरल होकर परिवर्तित हो जाता है । प्रकृति और मानव-जीवन के इस सुख सौन्दर्य का ज्ञान भी वेदान्त ज्ञान के समकक्ष ज्ञान कहलाने का अधिकारी है । इस ज्ञान से जो तृप्ति मिलती है, वह भी एक तरह की मुक्ति है ।

कामचेतना

निराला नारी के सौन्दर्य, पुरुष और नारी की कामचेतना और उस चेतना की स्वाभाविक परिणति के कवि हैं । मानव शरीर में यौवन का प्रवेश निराला के लिए विस्मय और कौतुहल का विषय है । धरती के हृदय से जैसे वसंत में स्वर सप्तक फूट पड़ते हैं, वैसे ही युवती के प्रणय देलित शरीर में भावसुमन खिल जाते हैं । यौवन की तरंग अपने प्रकाश से युवती को ज्योति की लता बना देती है किन्तु यह प्रकाश गन्धमय है, उसके शीर में फूलों के गुच्छे खिले हुए हैं । 'प्रेयसी' में निराला इस रुप का वर्णन रहस्यवा दियों के अनेक रुढ उपादानें द्वारा करते हैं ।

जहाँ रूप है, वहाँ यौवन है, जहाँ यौवन है, वहाँ रूप है । कहीं रूप जल है, यौवन प्रकाश है, कहीं यौवन प्रकाश है, रूप जल है । 'रूप की सजल प्रभा' में जल और प्रकाश दोनों तत्वों का मिश्रण है । यौवन को पवन से कंपित होते देखकर, गन्ध से प्रणय का आह्वान पाकर निराला सौन्दर्य के प्रति अपनी तात्विक दृष्टि-पंच तत्वों से बंधी दृष्टि का परिचय देते हैं ।

निराला को युवती का तपस्विनी रूप जो प्रिय के ध्यान में मग्न है, बहुत प्रिय है । निराला काव्य में जो रपसी है, युवती है, वह प्रणय लालसा से परिचित है ।

पंचम अध्याय

उपसंहार

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला का काव्य व्यक्तित्व इतना विराट, गहन गम्भीर और कुछ ऐसा सीमाहीन लगता है, जिसके अन्दर बाहरी विचार और सिद्धान्त और अध्ययन रेखाएँ तिरोहित हो जाती हैं और फिर जो कुछ भी रच कर बाहर आता है वह सिर्फ निराला' होते हैं । सामयिकता उनके व्यक्तित्व में घुल कर एक निजी और मौलिक रूप धारण करती है ।

संसार की किसी भी भाषा में ऐसे कवि बहुत कम होंगे, जो रचना स्तरों के अनेक रूपों को साथ-साथ वहन कर सकें और लगातार अनेक मुख्य अर्थों वाली कविताएँ रचने में समर्थ हों । इसका प्रमुख यही था कि निराला ने जीवन को एक ही साथ अनेक स्तरों पर जिया । जो आयास या सायास उनके काव्य-संसार में वर्णित होता चला गया ।

प्रारम्भ से ही निराला हिन्दी कविता के लिए एक नयी भाषा की खोज में जाने-अनजाने रत दिखाई देते हैं । निराला को केवल व्यक्ति के रूप में ही परिस्थितियो का तीव्र विरोध नहीं सहना पड़ा, वरन् कवि के रूप में भी उनका प्रबल विरोध हुआ । इसका प्रधान कारण तो उनकी मौलिकता है जो कवि के दीप्त अहंकार की साहित्यिक अभिव्यक्ति है । सन् १९१६ में 'जूही की कली' का प्रकाशन उस युग के साहित्यकारों के लिए एक चुनौती बनकर सामने आया । उसमें व्यक्त प्रणय-केलि के चित्र और मुक्त छन्द का शक्तिशाली शिल्प दोनों ही तत्कालीन मान्यताओं से मेल नहीं खाते थे । निराला ने सबकी उपेक्षा की । उनके काव्य में शुरु से ही विविधता के दर्शन होते हैं । यह विविधता भाषागत भी है और भावगत भी, विचारगत भी है और शिल्पगत भी । उदाहरणार्थ 'परिमल' में गीत भी है और मुक्त छन्द भी, मधुर भावों से अनुप्राणित प्रणयगीत भी ह्वैं और ओजपूर्ण रचनाएँ भी । उसमें 'अधिवास' और 'पंचवटी प्रसंग' जैसी दर्शन प्रधान रचनाएँ भी हैं और 'भिक्षुक' तथा 'विधवा' जैसी रचनाएँ भी जिनमें यथार्थ का तीव्र दंश दिखाई देता है ।

निराला की रचनाओं पर दर्शन का प्रत्यक्ष और गम्भीर प्रभाव है । आध्यात्मिक, भक्ति, गहन प्रेम, अवसाद, उदासी, खिन्नता, आत्म-साक्षात्कार या प्रकृति की छलछलाती हुई छवि के प्रति की प्रगाढ़ भाव सम्वेदना और उसकी ये भिन्न-भिन्न ध्वनियां, अर्थों और

रंगो की काव्य-दृष्टियाँ और रचना-स्तर लगातार प्रारम्भिक कविताओं से ही मिलने शुरु हो जाते हैं । राष्ट्रीय उद्‌बोधन का स्वर भी बहुत पहले से ही उनकी काव्य-सम्वेदना का अंग रहा है ।

'तुलसीदास' में कवि गोस्वामी तुलसीदास के माध्यम से भारतीय परम्परा के गौरवशाली मूल्यों की प्रतिष्ठा का प्रयास किया है । 'राम की शक्तिपूजा' निराला की ही नहीं, सम्पूर्ण छायावादी काव्य की एक उत्कृष्ट उपलब्धि है । 'शक्ति' की उपासना में एक और तो परम्परागत सत्य की स्वीकृति का संकेत निहित है और दूसरी ओर 'मौलिक कल्पना' इस बात पर बल देती है कि प्राचीन सांस्कृतिक आदर्शों का युगानुरूप संशोधन अनिवार्य है । इस कविता में विविध भावों और भाषा के विविध रूपों के दर्शन होते हैं, जो कवि की शक्ति के विविध पक्षों की अन्विति का परिणाम है ।

निराला का काव्य संसार सुर और शब्द के अद्‌भुत संयोग से निर्मित है । उनकी भाषिक संरचना का मूलाधार यही है । उनके गीतों के शब्द बन्ध कहीं भी शब्दार्थ को प्रधान मानकर निर्मित नहीं हुए हैं । अर्थ को स्वर का आधार दे कर ही निराला ने अपने गीतों की भाषिक संरचना तैयार की है ।

विचारधारा, भावबोध, कला ये सब मुनष्य के सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश से सम्बद्ध है किंतु उसकी यांत्रिक प्रतिच्छवि नहीं है । न मनुष्य का व्यक्तित्व सामाजिक सम्बन्धों का यांत्रिक परिणाम होता है, न उसका कृतित्व । निराला के साहित्य में जैसी महत्वपूर्ण भूमिका उनके युग की है, वैसी ही महत्वपूर्ण भूमिका उनके व्यक्तित्व की है । निराला मेधावी, चिंतनशील कवि है । उनकी कल्पनाशक्ति जैसी प्रबल है वैसा ही प्रखर उनका विवेश है ।

निराला का सहज स्वर उदात्त है, ओज उनके साहित्य का प्रधान गुण है । निराला एक ही कविता में भिन्न स्तरों पर अपने रचना कौशल का परिचय देते हैं । उनके श्रेष्ठ साहित्य में भाव चाहे कोमल हों, चाहे कठोर-एक अन्तर्निहित शक्ति का परिचय मिलता है । निराला के असीम काव्य-साधना को उनके भावबोधों को एक छोटे से शोध-पत्र में समेटा नहीं जा सकता । स्नातकोत्तर के दशम पत्र के रूप में मैने निराला के काव्य संसार को

चुना और छोटा सा प्रयास मात्र किया है । इस प्रयास में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जिन्होंने भी मेरी सहायता की है उनका में आभारी हूँ ।

सहायक पुस्तकें

१. निराला की साहित्य साधना : रामविलास शर्मा, प्रथम एवं द्वितीय खण्ड (१९६९/१९७२) राजकमल प्रकाशन, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली ।

२. क्रान्तिकारी कवि निराला : बच्चन सिंह, नंदकिशोर एण्ड संस वाराणसी (तृतीय संस्करण) १९६९

३. हिन्दी साहित्य का इतिहास : श्यामचन्द्र कपूर, ग्रंथ अकादमी, नई दिल्ली ।

४. निराला : आत्महंता आस्था : दूधनाथ सिंह, नीलाम प्रकाशन इलाहावाद १९७५ ।

५. निराला की कविताएँ और काव्यभाषा : रेखा खरे, लोकभारती प्रकाशन, इलाहावाद, १९७६ ।

६. निराला काव्य और व्यक्तित्व : धनंजय वर्मा, विधा प्रकाशन मंदिर, दरियागंज, नई दिल्ली, १९६५ ।

७. निराला : परमानंद श्रीवास्तव, साहितय अकादमी, प्रथम संस्करण १९७४ नई दिल्ली ।